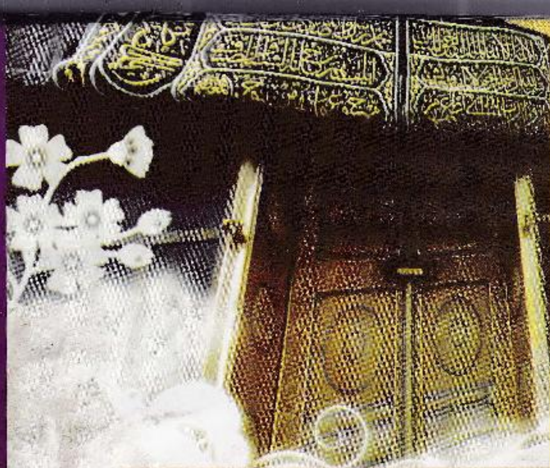
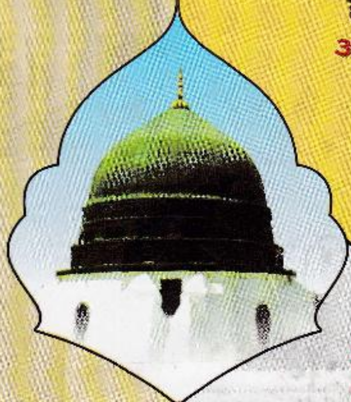




मौजूदा ज़माना के आम इख़्तिलाफ़ी मसाइल का
निहायत तहक़ीक़ी और दलील के साथ अहम फ़ैसला

जाअल हक़
व-ज़हक़ल बातिल मुकम्मल

लेखक
हज़रत अल्लामा मुफ़्ती
अहमद यार ख़ां नईमी





M-09825696131

पब्लिशर
रज़वी किताब घर
423, मटिया महल जामा मस्जिद, दिल्ली–06

अक़ाइद उम्दा थे और मज़्हब उनका हंबली था। अल्बत्ता उनके मिज़ाज में शिद्दत थी। और उनके मुक़्तदी अच्छे हैं मगर हाँ जो हद से बढ़ गए उनमें फ़साद आ गया है और अक़ाइद सबके मुत्तहिद हैं। आमाल में फ़र्क़ हन्फ़ी, शाफ़ई, मालिकी, हंबली है।" (रशीद अहमद)

लेकिन मौजूदा ज़माना में ब-मुक़ाबला ग़ैर मुक़ल्लेदीन के ज़्यादा ख़तरनाक देवबन्दी हैं। क्योंकि आम मुसलमान उनको पहचान नहीं सकते। उन लोगों ने अपनी किताबों में हुज़ूर अलैहिस्सलाम की ऐसी तौहीनें कीं कि कोई खुला हुआ मुश्रिक भी नहीं कर सकता। मगर फिर भी मुसलमानों के पेशवा बनते हैं। और इस्लाम के अकेले ठेकेदार।

मौलवी अशरफ़ अली साहब थानवी ने हिफ़्ज़ुल-ईमान में हुज़ूर अलैहिस्सलाम के इल्म को जानवरों के इल्म की तरह बताया। मौलवी ख़लील अहमद साहब अंबेठी ने अपनी किताब बराहीने क़ातेआ में शैतान और मलकुल-मौत का इल्म हुज़ूर अलैहिस्सलाम के इल्म से ज़्यादा बताया। मौलवी इस्माईल साहब देहलवी ने नमाज़ में हुज़ूर अलैहिस्सलाम के ख़्याल को गधे और बैल के ख़्याल से बदतर लिखा। मौलवी क़ासिम साहब नानौतवी ने **तहज़ीरुन्नास** में हुज़ूर अलैहिस्सलाम को ख़ातमुन्नबीयीन यानी आख़िरी नबी मानने से इंकार किया और कहा कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम के बाद अगर और भी नबी आ जाएं तब भी ख़ातमीयत में कुछ फ़र्क़ न आएगा। ख़ातम के माना हैं असल नबी। दीगर नबी हैं नबी आर्ज़ी। यही मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद क़ादियानी ने कहा कि मैं बरोज़ी नबी हूँ। ग़र्ज़ेकि मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद इस मसला में उनका शागिर्द रशीद हुआ।

इन साहिबों के यहाँ तौहीद के माना हैं अंबिया की तौहीन जैसे कि रवाफ़िज़ के यहाँ हुब्बे अली के माना हैं बुग्ज़ सहाब-ए-किराम। हालांकि यह तौहीद तो शैतानी तौहीद है। उसने हज़रत आदम की अज़मत से इंकार किया ग़ैरे ख़ुदा के सामने न झुका। फिर जो उसका हश्र हुआ वह आज तक लोग देख रहे हैं कि हर जगह उसकी **ला हौला** से ख़ातिर की जाती है।

इस्लामी तौहीद है अल्लाह तआला को एक जानना, उसके महबूबों की इज़्ज़त व अज़मत करना जिसकी तालीम है **ला इलाहा इल्लल्लाहु मुहम्मदुर्रसूलुल्लाह** पहले हिस्से में अल्लाह की वहदानियत का इक़रार है, दूसरे में अज़्मते मुस्तफ़ा का इज़्हार। आजकल जिस जगह भी देखा गया मुसलमानों में अह्ले सुन्नत और देवबन्दियों में झगड़े पड़े हुए हैं। हर जगह ख़ाना जंगी है हर कारे ख़ैर को रोकने की कोशिश। कहीं इल्मे ग़ैब पर बहस है तो कहीं हुज़ूर अलैहिस्सलाम के हाज़िर व नाज़िर होने पर तकरार। कहीं महफ़िले मीलाद व फ़ातिहा पर बहस कहीं मज़ाराते औलिया अल्लाह पर कुब्बा बनाने पर मुनाज़रा। अगरचे उनमें से हर एक मसाइल में अह्ले सुन्नत

जो शरीअत के मुक़ाबला में जाहिल बाप दादों के हराम कामों में की जाए कि चूंकि हमारे बाप दादा ऐसा करते थे हम भी ऐसा करेंगे चाहे यह काम जाइज़ हो या ना जाइज़।

रही शरई तक़्लीद और अइम्म-ए-दीन की इताअत। इस से इन आयात का कोई तअल्लुक़ नहीं। इन आयतों से तक़्लीदे अइम्मा को शिर्क या हराम कहना महज़ बेदीनी है। इसका बहुत ख़्याल रहे।

दूसरा बाब
किन मसाइल में तक़्लीद की जाती है किन में नहीं

तक़्लीदे शरई में कुछ तफ़्सील है। शरई मसाइल तीन तरह के हैं। (1) अक़ाइद (2) वह अहकाम जो साफ़-साफ़ कुरआन पाक या हदीस शरीफ़ से साबित हों इज्तिहाद को उनमें दख़ल न हो। (3) वह अहकाम जो कुरआन या हदीस से ग़ौर व खोज करके निकाले जाएं।

अक़ाइद में किसी की तक़्लीद जाइज़ नहीं। तफ़्सीरे रुहुल-बयान आख़िर सूरः हूद ज़ेरे आयत **नसीबहुम ग़ैरा मन्कूसिन** में है।

तर्जमा : अगर कोई हम से पूछे कि तौहीद व रिसालत वग़ैरह तुमने कैसे मानी। तो यह न कहा जाएगा कि हज़रत इमाम अबू हनीफ़ा रज़ि अल्लाहु अन्हु के फरमाने से या कि फ़िक़्हे अक्बर से बल्कि दलाइले तौहीद व रिसालत से क्योंकि अक़ाइद में तक़्लीद नहीं होती।

मुक़द्दमा शामी **बहसु तक़्लीदुल-मफ़्ज़ूल मअल-अफ़्ज़ल** में है।

तर्जमा : यानी जिनका हम एतक़ाद रखते हैं फ़रई मसाइल के अलावा कि जिनका एतक़ाद रखना हर मुकल्लफ़ पर बग़ैर किसी की तक़्लीद के वाजिब है वह अक़ाइद वही हैं जिन पर अह्ले सुन्नत व जमाअत हैं। वह अह्ले सुन्नत अशाइरह और मा तुरीदिया हैं और तफ़्सीरे कबीर पारा दस ज़ेरे आयत **फ़अजिरहु हत्ता यस्मआ कलामल्लाहे** में है।

ज़ाहिरी अहकाम में भी किसी की तक़्लीद जाइज़ नहीं। पाँच नमाज़ें, नमाज़ की रकअतें, तीस रोज़े, रोज़े में खाना पीना हराम होना, यह वह मसाइल हैं जिनका सुबूत नस से सराहतन है इसलिए यह न कहा जाएगा कि नमाज़ें पाँच इसलिए हैं या रोज़े एक माह के इसलिए हैं कि फ़िक़्हः अक्बर में लिखा है या इमाम अबू हनीफ़ा ने फरमाया है बल्कि इसके लिए कुरआन व हदीस से दलाइल दिए जाएंगे।

जो मसाइल कुरआन व हदीस या इज्मा-ए-उम्मत से इज्तिहाद व इस्तिंबात करके निकाले जाएं उनमें ग़ैर मुज्तहिद पर तक़्लीद करना वाजिब

है। मसाइल की जो हमने तक़्सीम कर दी और बता दिया कि कौन से मसाइल तक़्लीद यह हैं और कौन से नहीं। इसका बहुत लिहाज़ रहे। बहुत से मौक़ा पर ग़ैर मुक़ल्लिद एतराज़ करते हैं कि मुक़ल्लिद को हक़ नहीं होता कि दलाइल से मसाइल निकाले। फिर तुम लोग नमाज़ व रोज़े के लिए कुरआनी आयतें या अहादीस क्यों पेश करते हो इसका जवाब भी इस बात में आ गया कि रोज़ा व नमाज़ की फ़र्ज़ीयत तक़्लीदी मसाइल से नहीं। यह भी मालूम हुआ कि सिवाए अहकामे ख़बर वग़ैरह में तक़्लीद न होगी जैसे कि मसलए कुफ़्रे यज़ीद वग़ैरह। और क़्यासी मसाइल में फुक़हा का क़ुरआन व हदीस से दलाइल पेश करना सिर्फ़ माने हुए मसाइल की ताईद के लिए होता है। वह मसाइल पहले ही से क़ौले इमाम से माने हुए होते हैं। तो बिला नज़र फ़िद्दलील के यह मानी नहीं कि मुक़ल्लिद दलाइल देखे ही नहीं। बल्कि यह दलाइल से मसाइल हल न करे।

तीसरा बाब

किस पर तक़्लीद करना वाजिब है और किस पर नहीं

मुकल्लफ़ मुसलमान दो तरह के हैं एक मुज्तहिद, दूसरे ग़ैर मुज्तहिद। मुज्तहिद वह है जिसमें इस क़द्र इल्मी लियाक़त और क़ाबलीयत हो कि कुरआनी इशारात व राज़ों को समझ सके। और कलाम के मक़्सद को पहचान सके। इससे मसाइल निकाल सके। नासिख़ व मंसूख़ का पूरा इल्म रखता हो। इल्मे सर्फ़ व नह्व व बलाग़त वग़ैरह में उसको पूरी महारत हासिल हो। अहकाम की तमाम आयतों और अहादीस पर उसकी नज़र हो। इसके अलावा ज़की और ख़ुश फ़हम हो। देखो तफ़्सीराते अहमदिया वग़ैरह और जो कि इस दरजा पर न पहुँचा हो वह ग़ैर मुज्तहिद या मुक़ल्लिद है। ग़ैर मुज्तहिद पर तक़्लीद ज़रूरी है मुज्तहिद के लिए तक़्लीद मना, मुज्तहिद के छेः तब्क़े हैं।

(1) मुज्तहिद फ़िश शरअ् (2) मुज्तहिद फ़िल–मज़हब (3) मुज्तहिद फ़िल–मसाइल (4) अस्हाबुत्तख़रीज (5) अस्हाबुत्तर्जीह (6) अस्हाबुत्तमीज़ (मुक़द्दमा शामी बहस तब्क़ातुल–फुक़हा)

(1) **मुज्तहिद फ़िश शरअ्** : वह हज़रात हैं जिन्होंने इज्तिहाद करने के क़वाइद बनाए जैसे चारों इमाम अबू हनीफ़ा, शाफ़ई, मालिक, अहमद बिन हंबल रज़ि अल्लाहु अन्हुम अज्मईन।

(2) **मुज्तहिद फ़िल-मज़्हब** : वह हज़रात हैं जो इन उसूल में तक़्लीद करते हैं। और इन उसूल से मसाइले शरईया फ़रईया ख़ुद निकाल सकते हैं। जैसे इमाम अबू यूसुफ़ व मुहम्मद व इब्ने मुबारक रहमहुल्लाह अज्मईन

कि यह क़वाइद में हज़रत इमाम अबू हनीफ़ा रज़ि अल्लाहु अन्हु के मुक़ल्लिद हैं और मसाइल में ख़ुद मुज्तहिद।

(3) **मुज्तहिद फ़िल-मसाइल** : वह हज़रात हैं जो क़वाइद और मसाइले फ़रईया दोनों में मुक़ल्लिद हैं मगर वह मसाइल जिनके मुतअल्लिक़ अइम्मा की वज़ाहत नहीं मिलती उनको क़ुरआन व हदीस वग़ैरह दलाइल से निकाल सकते हैं जैसे इमाम तहावी और क़ाज़ी ख़ाँ, शम्सुल-अइम्मा सरख़सी वग़ैरा।

(4) **अस्हाबे तख़्रीज** : वह हज़रात हैं तो इज्तिहाद तो बिल्कुल नहीं कर सकते। हां अइम्मा में से किसी के मुख़्तसर क़ौल की तफ़्सील फरमा सकते हैं। जैसे इमाम करख़ी वग़ैरह।

(5) **अस्हाबे तरजीह** : वह हज़रात हैं जो इमाम साहब की चन्द रिवायात में से बाज़ को तरजीह दे सकते हैं यानी अगर किसी मसला में हज़रत इमाम अबू हनीफ़ा रज़ि अल्लाहु अन्हु के दो क़ौल रिवायत में आए तो उनमें किस को तरजीह दें वह कर सकते हैं। इसी तरह जहाँ इमाम साहब और साहिबैन का इख़्तिलाफ़ हो तो किसी के क़ौल को तरजीह दे सकते है कि हाज़ा औला या हाज़ा असह वग़ैरह जैसे साहिबे क़ुदूरी और साहिबे हिदायह।

(6) **अस्हाबे तमीज़** : वह हज़रात हैं जो ज़ाहिर मज़हब और रिवायाते नादिरह इसी तरह क़ौले ज़ईफ़ और क़वी और ज़्यादा मज़बूत में फ़र्क़ कर सकते हैं कि अक़वाले रद्दशुदा और रिवायाते ज़ईफ़ा को तर्क कर दें। और सही रिवायात और मोतबर क़ौल को लें। जैसे कि साहिबे कन्ज़ और साहिबे दुर्रे मुख़्तार वग़ैरह।

जिनमें इन छे: वस्फ़ों में से कुछ भी न हों। वह मुक़ल्लिद महज़ हैं। जैसे हम और हमारे ज़माना के आम उलमा उनका सिर्फ़ यही काम है कि किताब से मसाइल देख कर लोगों को बताएं। OK

हम पहले अर्ज़ कर चुके हैं कि मुज्तहिद को तक़्लीद करना हराम है। तो इन छे: तब्क़ों में जो साहब जिस दरजा के मुज्तहिद होंगे वह इस दरजा में किसी की तक़्लीद न करेंगे और इससे ऊपर वाले दरजा में मुक़ल्लिद होंगे जैसे इमाम अबू यूसुफ़ व मुहम्मद रहमहुल्लाहु तआला कि यह हज़रात उसूल व क़वाइद में तो इमाम आज़म रहमतुल्लाह अलैहि के मुक़ल्लिद हैं और मसाइल में चूंकि ख़ुद मुज्तहिद हैं इसलिए उनमें मुक़ल्लिद नहीं।

हमारी इस तक़रीर से ग़ैर मुक़ल्लिदों का यह सवाल भी उठ गया कि जब इमाम अबू यूसुफ़ व मुहम्मद अलैहिमर्रहमा: हन्फ़ी हैं और मुक़ल्लिद हैं तो इमाम अबू हनीफ़ा रहमतुल्लाह अलैहि की जगह-जगह मुख़ालफ़त क्यों करते हैं। तो यही कहा जाएगा कि उसूल व क़वाइद में यह हज़रात

मुक़ल्लिद हैं इसमें मुख़ालिफ़त नहीं करते और फ़ुरूई मसाइल में मुख़ालफ़त करते हैं। उनमें ख़ुद मुज्तहिद हैं वह किसी के मुक़ल्लिद नहीं।

यह सवाल भी उठ गया कि तुम बहुत से मसाइल में साहिबैन के क़ौल पर फ़तवा देते हो। और इमाम अबू हनीफ़ा रहमतुल्लाह अलैह के क़ौल को छोड़ते हो फिर तुम हन्फ़ी कैसे? जवाब आ गया कि बाज़ दरजा के फ़ुक़हा अस्हाबे तरजीह भी हैं जो चन्द क़ौलों में से बाज़ को तरजीह देते हैं इसीलिए हम को उन फ़ुक़हा का तरजीह दिया हुआ जो क़ौल मिला उस पर फ़तवा दिया गया।

यह सवाल भी उठ गया कि तुम अपने को हन्फ़ी फिर क्यों कहते हो? यूसुफ़ी या मुहम्मदी या इब्ने मुबारकी कहो! क्योंकि बहुत सी जगह तुम उनके क़ौल पर अमल करते हो इमाम अबू हनीफ़ा का क़ौल छोड़ कर। जवाब यही हुआ कि चूंकि अबू यूसुफ़ व मुहम्मद व इब्ने मुबारक रहमहुमुल्लाह तआला के तमाम अक़्वाल इमाम अबू हनीफ़ा अलैहिर्रहमाः के उसूल और क़वानीन पर बने हैं। लिहाज़ा इनमें से किसी भी क़ौल को लेना दरहक़ीक़त इमाम साहब ही के क़ौल को लेना है। जैसे हदीस पर अमल दरहक़ीक़त क़ुरआन पर ही अमल है कि रब तआला ने इसका हुक्म दिया है। मसलन इमाम आज़म रहमतुल्लाह अलैह फरमाते हैं कि कोई हदीस सही साबित हो जाए तो वही मेरा मज़्हब है। अब अगर कोई मुज्तहिद फ़िल-मज़हब कोई सही हदीस पाकर उस पर अमल करे तो वह इससे ग़ैर मुक़ल्लिद न होगा बल्कि हन्फ़ी ही रहेगा। क्योंकि उसने हदीस पर इमाम साहब के इस क़ाइदे से अमल किया। यह पूरी बहस देखो मुक़द्दमा शामी मतलब **सह्हा अनिल-इमामे इज़ा सह्हल-हदीस फ़हुवा मज़्हबी** इमाम साहब के इस क़ौल का मतलब यह भी हो सकता है कि जब कोई हदीस सही साबित हुई है तो वह मेरा मज़्हब बनी यानी हर मसला और हर हदीस में मैं ने बहुत जिरह क़दह और तहक़ीक़ की है। तब उसे इख़्तियार किया। चुनांचे हज़रत इमाम के यहाँ हर मसला की बड़ी छान बीन होती थी। मुज्तहिद शागिर्दों से निहायत तहक़ीक़ी गुफ़्तगू के बाद इख़्तियार फ़रमाया जाता था।

अगर यह मुख़्तसर तक़रीर ख़्याल में रखी गई तो बहुत मुश्किलों को इंशाअल्लाह हल कर देगी, और बहुत काम आएगी।

कुछ ग़ैर मुक़ल्लिद कहते हैं कि हम में इज्तिहाद करने की क़ुव्वत है लिहाज़ा हम किसी की तक़्लीद नहीं करते। इसके लिए बहुत तवील गुफ़्तगू की ज़रूरत नहीं। सिर्फ़ यह दिखाना चाहता हूँ कि इज्तिहाद के लिए किस क़द्र इल्म की ज़रूरत है और इन हज़रात को वह क़ुव्वते इल्मी हासिल है या नहीं।

हज़रत इमाम राज़ी, इमाम ग़ज़ाली वग़ैरह इमाम तिर्मिज़ी और इमाम

हज़रत इमाम राज़ी, इमाम ग़ज़ाली वग़ैरह इमाम तिर्मिज़ी और इमाम

दाऊद वग़ैरह हुज़ूर ग़ौसे पाक, हज़रत बायज़ीद बुस्तामी, शाह बहा-उल-हक़ नक़्शबन्द इस्लाम में ऐसे पाए के उलमा और मशाइख़ गुज़रे कि इन पर अह्ले इस्लाम जिस क़द्र भी फ़ख़्र करें कम है। मगर इन हज़रात में से कोई साहब भी मुज्तहिद न हुए बल्कि सब मुक़ल्लिद हुए। ख़्वाह इमाम शाफ़ई के मुक़ल्लिद हों या इमाम अबू हनीफ़ा के रज़ि अल्लाहु अन्हुम अज्मईन। ज़माना मौजूदा में कौन उनकी क़ाबलीयत का है। जब उनका इल्म मुज्तहिद बनने के लिए काफ़ी न हुआ तो जिन बेचारों को अभी हदीस की किताबों के नाम लेना भी न आते हों वह किस शुमार में हैं।

एक साहब ने दावा इज्तिहाद किया था। मैंने उनसे सिर्फ़ इतना पूछा कि सूरः तकासुर से किस क़द्र मसाइल आप निकाल सकते हैं। और इसमें हक़ीक़त, मजाज़, सरीह व किनाया ज़ाहिर व नस कितने हैं। इन बेचारों ने इन चीज़ों के नाम भी न सुने थे।

मुक़ल्लिद हैं इसमें मुख़ालिफ़त नहीं करते और फ़ुरूई मसाइल में मुख़ालफ़त करते हैं। उनमें ख़ुद मुज्तहिद हैं वह किसी के मुक़ल्लिद नहीं।

यह सवाल भी उठ गया कि तुम बहुत से मसाइल में साहिबैन के क़ौल पर फ़तवा देते हो। और इमाम अबू हनीफ़ा रहमतुल्लाह अलैह के क़ौल को छोड़ते हो फिर तुम हन्फ़ी कैसे? जवाब आ गया कि बाज़ दरजा के फ़ुक़हा अस्हाबे तरजीह भी हैं जो चन्द क़ौलों में से बाज़ को तरजीह देते हैं इसीलिए हम को उन फ़ुक़हा का तरजीह दिया हुआ जो क़ौल मिला उस पर फ़तवा दिया गया।

यह सवाल भी उठ गया कि तुम अपने को हन्फ़ी फिर क्यों कहते हो? यूसुफ़ी या मुहम्मदी या इब्ने मुबारकी कहो! क्योंकि बहुत सी जगह तुम उनके क़ौल पर अमल करते हो इमाम अबू हनीफ़ा का क़ौल छोड़ कर। जवाब यही हुआ कि चूंकि अबू यूसुफ़ व मुहम्मद व इब्ने मुबारक रहमहुमुल्लाह तआला के तमाम अक़्वाल इमाम अबू हनीफ़ा अलैहिर्रहमाः के उसूल और क़वानीन पर बने हैं। लिहाज़ा इनमें से किसी भी क़ौल को लेना दरहक़ीक़त इमाम साहब ही के क़ौल को लेना है। जैसे हदीस पर अमल दरहक़ीक़त क़ुरआन पर ही अमल है कि रब तआला ने इसका हुक्म दिया है। मसलन इमाम आज़म रहमतुल्लाह अलैह फरमाते हैं कि कोई हदीस सही साबित हो जाए तो वही मेरा मज़्हब है। अब अगर कोई मुज्तहिद फ़िल-मज़हब कोई सही हदीस पाकर उस पर अमल करे तो वह इससे ग़ैर मुक़ल्लिद न होगा बल्कि हन्फ़ी ही रहेगा। क्योंकि उसने हदीस पर इमाम साहब के इस क़ाइदे से अमल किया। यह पूरी बहस देखो मुक़द्दमा शामी मतलब **सह्हा अनिल-इमामे इज़ा सह्हल-हदीस फ़हुवा मज़्हबी** इमाम साहब के इस क़ौल का मतलब यह भी हो सकता है कि जब कोई हदीस सही साबित हुई है तो वह मेरा मज़्हब बनी यानी हर मसला और हर हदीस में मैं ने बहुत जिरह क़दह और तहक़ीक़ की है। तब उसे इख़्तियार किया। चुनांचे हज़रत इमाम के यहाँ हर मसला की बड़ी छान बीन होती थी। मुज्तहिद शागिर्दों से निहायत तहक़ीक़ी गुफ़्तगू के बाद इख़्तियार फरमाया जाता था।

अगर यह मुख़्तसर तक़रीर ख़्याल में रखी गई तो बहुत मुश्किलों को इंशाअल्लाह हल कर देगी, और बहुत काम आएगी।

कुछ ग़ैर मुक़ल्लिद कहते हैं कि हम में इज्तिहाद करने की क़ुव्वत है लिहाज़ा हम किसी की तक़्लीद नहीं करते। इसके लिए बहुत तवील गुफ़्तगू की ज़रूरत नहीं। सिर्फ़ यह दिखाना चाहता हूँ कि इज्तिहाद के लिए किस क़द्र इल्म की ज़रूरत है और इन हज़रात को वह क़ुव्वते इल्मी हासिल है या नहीं।

हज़रत इमाम राज़ी, इमाम ग़ज़ाली वग़ैरह इमाम तिर्मिज़ी और इमाम

दाऊद वग़ैरह हुज़ूर ग़ौसे पाक, हज़रत बायज़ीद बुस्तामी, शाह बहा-उल-हक़ नक़्शबन्द इस्लाम में ऐसे पाए के उलमा और मशाइख़ गुज़रे कि इन पर अह्ले इस्लाम जिस क़द्र भी फ़ख़्र करें कम है। मगर इन हज़रात में से कोई साहब भी मुज्तहिद न हुए बल्कि सब मुक़ल्लिद हुए। ख़्वाह इमाम शाफ़ई के मुक़ल्लिद हों या इमाम अबू हनीफ़ा के रज़ि अल्लाहु अन्हुम अज्मईन। ज़माना मौजूदा में कौन उनकी क़ाबलीयत का है। जब उनका इल्म मुज्तहिद बनने के लिए काफ़ी न हुआ तो जिन बेचारों को अभी हदीस की किताबों के नाम लेना भी न आते हों वह किस शुमार में हैं।

एक साहब ने दावा इज्तिहाद किया था। मैंने उनसे सिर्फ़ इतना पूछा कि सूरः तकासुर से किस क़द्र मसाइल आप निकाल सकते हैं। और इसमें हक़ीक़त, मजाज़, सरीह व किनाया ज़ाहिर व नस कितने हैं। इन बेचारों ने इन चीज़ों के नाम भी न सुने थे।

चौथा बाब
तक़्लीद वाजिब होने के दलाइल में

इस बाब में हम दो फ़स्लें लिखते हैं। पहली फ़स्ल में तो सिर्फ़ तक़्लीद के दलाइल हैं। दूसरी में तक़्लीदे शख़्सी के दलाइल।

फ़स्ले अव्वल : तक़्लीद का वाजिब होना क़ुरआनी आयात और अहादीसे सहीहा और अमले उम्मत और अक़्वाले मुफ़स्सेरीन से साबित है। तक़्लीद मुतलक़न भी और तक़्लीदे मुज्तहेदीन भी एक तक़्लीद का सुबूत है। *इह्दिनस सिरातल मुस्तक़ीम सिरातल्लज़ी न अनअमत अलैहिम।* **(सूरः फ़ातिहा)**

तरजमा : हम को सीधा रास्ता चला, उनका रास्ता जिन पर तूने एहसान किया।

इससे मालूम हुआ कि सिराते मुस्तक़ीम वही है जिस पर अल्लाह के नेक बन्दे चले हों। और तमाम मुफ़स्सेरीन, मुहद्देसीन, फ़ुक़हा, औलिया अल्लाह, ग़ौस व क़ुतुब व अब्दाल अल्लाह के नेक बन्दे हैं वह सब ही मुक़ल्लिद गुज़रे लिहाज़ा तक़्लीद ही सीधा रास्ता हुआ। कोई मुहद्दिस व मुफ़स्सिर, वली ग़ैर मुक़ल्लिद न गुज़रा। ग़ैर मुक़ल्लिद वह है जो मुज्तहिद न हो फिर तक़्लीद न करे। जो मुज्तहिद हो कर तक़्लीद न करे वह ग़ैर मुक़ल्लिद नहीं। क्योंकि मुज्तहिद को तक़्लीद करना मना है।

(2) **ला युकल्लिफ़ुल्लाहु नफ़्सन इल्ला वुस्अहा** (सूरः बक़र)

तरजमा : अल्लाह किसी जान पर बोझ नहीं डालता मगर उसकी ताक़त भर। इस आयत से मालूम हुआ कि ताक़त से ज़्यादा काम की ख़ुदा तआला किसी को तक़्लीफ़ नहीं देता। तो जो शख़्स इज्तिहाद न कर सके और क़ुरआन से मसाइल न निकाल सके उससे तक़्लीद न कराना और उससे

दाऊद वग़ैरह हुज़ूर ग़ौसे पाक, हज़रत बायज़ीद बुस्तामी, शाह बहा-उल-हक़ नक़्शबन्द इस्लाम में ऐसे पाए के उलमा और मशाइख़ गुज़रे कि इन पर अह्ले इस्लाम जिस क़द्र भी फ़ख़्र करें कम है। मगर इन हज़रात में से कोई साहब भी मुज्तहिद न हुए बल्कि सब मुक़ल्लिद हुए। ख़्वाह इमाम शाफ़ई के मुक़ल्लिद हों या इमाम अबू हनीफ़ा के रज़ि अल्लाहु अन्हुम अज्मईन। ज़माना मौजूदा में कौन उनकी क़ाबलीयत का है। जब उनका इल्म मुज्तहिद बनने के लिए काफ़ी न हुआ तो जिन बेचारों को अभी हदीस की किताबों के नाम लेना भी न आते हों वह किस शुमार में हैं।

एक साहब ने दावा इज्तिहाद किया था। मैंने उनसे सिर्फ़ इतना पूछा कि सूरः तकासुर से किस क़द्र मसाइल आप निकाल सकते हैं। और इसमें हक़ीक़त, मजाज़, सरीह व किनाया ज़ाहिर व नस कितने हैं। इन बेचारों ने इन चीज़ों के नाम भी न सुने थे।

चौथा बाब
तक़्लीद वाजिब होने के दलाइल में

इस बाब में हम दो फ़स्लें लिखते हैं। पहली फ़स्ल में तो सिर्फ़ तक़्लीद के दलाइल हैं। दूसरी में तक़्लीदे शख़्सी के दलाइल।

फ़स्ले अव्वल : तक़्लीद का वाजिब होना कुरआनी आयात और अहादीसे सहीहा और अमले उम्मत और अक़्वाले मुफ़स्सेरीन से साबित है। तक़्लीद मुतलक़न भी और तक़्लीदे मुज्तहेदीन भी एक तक़्लीद का सुबूत है। *इहिदनस सिरातल मुस्तक़ीम सिरातल्लज़ी न अनअमत अलैहिम।* **(सूरः फ़ातिहा)**

तरजमा : हम को सीधा रास्ता चला, उनका रास्ता जिन पर तूने एहसान किया।

इससे मालूम हुआ कि सिराते मुस्तक़ीम वही है जिस पर अल्लाह के नेक बन्दे चले हों। और तमाम मुफ़स्सेरीन, मुहद्देसीन, फ़ुक़हा, औलिया अल्लाह, ग़ौस व कुतुब व अब्दाल अल्लाह के नेक बन्दे हैं वह सब ही मुक़ल्लिद गुज़रे लिहाज़ा तक़्लीद ही सीधा रास्ता हुआ। कोई मुहद्दिस व मुफ़स्सिर, वली ग़ैर मुक़ल्लिद न गुज़रा। ग़ैर मुक़ल्लिद वह है जो मुज्तहिद न हो फिर तक़्लीद न करे। जो मुज्तहिद हो कर तक़्लीद न करे वह ग़ैर मुक़ल्लिद नहीं। क्योंकि मुज्तहिद को तक़्लीद करना मना है।

(2) **ला युकल्लिफुल्लाहु नफ़्सन इल्ला वुस्अहा** (सूरः बक़र)

तरजमा : अल्लाह किसी जान पर बोझ नहीं डालता मगर उसकी ताक़त भर। इस आयत से मालूम हुआ कि ताक़त से ज़्यादा काम की ख़ुदा तआला किसी को तक़्लीफ़ नहीं देता। तो जो शख़्स इज्तिहाद न कर सके और कुरआन से मसाइल न निकाल सके उससे तक़्लीद न कराना और उससे

इस्तिंबात (मसाइल निकालना) कराना ताक़त से ज़्यादा बोझ डालना है। जब ग़रीब आदमी पर ज़कात और हज फ़र्ज़ नहीं है तो बे-इल्म पर मसाइल व इस्तिंबात करना क्यों कर ज़रूरी होगा।

(3) **वस्साबिकूनल-अव्वलून मिनल-मुहाजिरीना वल-अंसारे वल्लज़ीना तबऊहुम बे-एहसानिन रज़ि अल्लाहु अन्हुम व रज़ू अन्हु** और सब में अगले पिछले मुहाजिर व अंसार और जो भलाई के साथ उनके पैरू हुए अल्लाह उन से राज़ी और वह अल्लाह से राज़ी।

मालूम हुआ कि अल्लाह उनसे राज़ी है जो मुहाजिरीन और अंसार की इत्तेबा यानी तक़्लीद करते हैं। यह भी तक़्लीद हुई।

(4) **अतीउल्लाहा व अतीउर्रसूला व ऊलिल अम्रे मिन्कुम।** इताअत करो अल्लाह की और इताअत करो रसूल की और हुक्म वालों की जो तुम में से हों।

इस आयत में तीन ज़ातों की इताअत का हुक्म दिया गया। अल्लाह की (कुरआन) रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की (हदीस) अम्र वालों की (फ़िक़्हः व इस्तिंबात के उलमा) मगर कलिमा **अतीउल्लाह** दो जगह लाया गया। अल्लाह के लिए एक और रसूल अलैहिस्सलाम और हुक्म वालों के लिए एक। क्योंकि अल्लाह की सिर्फ़ उसके फरमाने में ही इताअत की जाएगी न कि उसके फ़ेअल में और न उसके सुकूत में। वह कुफ़्फ़ार को रोज़ी देता है कभी उनको ज़ाहिरी फ़तह देता है वह कुफ़्र करते हैं मगर उनको फ़ौरन अज़ाब नहीं भेजता। हम इसमें रब तआला की पैरवी नहीं कर सकते कि कुफ़्फ़ार की इमदाद करें ब-ख़िलाफ़ नबी अलैहिस्सलाम व इमाम मुज्तहिद के, कि उनका हर हुक्म उनका हर काम और उनका किसी को कुछ काम करते हुए देख कर ख़ामोश होना तीनों चीज़ों में पैरवी की जाएगी। इस फ़र्क़ की वजह से दो जगह **अतीऊ** फरमाया। अगर कोई कहे कि अम्र वालों से मुराद सुल्ताने इस्लामी है तो सुल्ताने इस्लामी की इताअत शरई अहकाम में की जाएगी न कि ख़िलाफ़े शरअ चीज़ों में। और सुल्तान वह शरई अहकाम उलमा मुज्तहेदीन ही से मालूम करेगा। हुक्म तो असल में फ़क़ीह का होता है। इस्लामी सुल्तान महज़ उसका जारी करने वाला होता है। तमाम रिआया का हाकिम बादशाह और बादशाह का हाकिम आलिम मुज्तहिद। लिहाज़ा नतीजा वही निकला कि **ऊलिल-अम्रे** उलमा-ए-मुज्तहेदीन ही हुए। और अगर बादशाहे इस्लामी भी मुराद लो जब भी तक़्लीद तो साबित हो ही गई आलिम की न हुई बादशाह की हुई।

यह भी ख़्याल रहे कि आयत में इताअत से मुराद शरई इताअत है।

एक नुक्ता इस आयत में यह भी है कि अहकाम तीन तरह के हैं साफ़-साफ़ कुरआन से साबित जैसे कि जिस औरत ग़ैर हामिला का शौहर

मर जाए तो उसकी इद्दत चार माह दस दिन है। उनके लिए हुक्म हुआ। **अतीउल्लाहा** दूसरे दो जो साफ़–साफ़ हदीस से साबित हैं। जैसे कि चांदी सोने का ज़ेवर मर्द को पहनना हराम है इसके लिए फरमाया **व अतीउर्रसूला** तीसरे वह जो न तो सराहतन (साफ़–साफ़) कुरआन से साबित हैं न हदीस से जैसे कि औरत से इग़लाम करने की हुर्मते क़तई उसके लिए फरमाया गया **ऊलिल-अम्रे मिन्कुम** तीन तरह के अहकाम और तीन हुक्म।

(5) **फ़स्अलू अह्लज़्ज़िक्रे इन कुन्तुम ला तालमून।** तो ऐ लोगो! इल्म वालों से पूछो अगर तुमको इल्म नहीं।

इस आयत से मालूम हुआ कि जो शख़्स जिस मसला को न जानता हो वह अह्ले इल्म से दरयाफ़्त करे। वह इज्तिहादी मसाइल जिनके निकालने की हम में ताक़त न हो मुज्तहेदीन से दरयाफ़्त किए जाएंगे। कुछ लोग कहते हैं कि इससे मुराद तारीख़ी वाक़ेआत हैं जैसा कि ऊपर की आयत से साबित है लेकिन यह सही नहीं। इसलिए कि इस आयत के कलिमात मुतलक़ बग़ैर क़ैद के हैं और पूछने की वजह है न जानना। तो जिस चीज़ को हम न जानते हों उसका पूछना लाज़िम है।

(6) **वत्तबिअ सबीला मन अनाबा इलैया** और उसकी राह चल जो मेरी तरफ रुजू लाया।

इस आयत से भी मालूम हुआ कि अल्लाह की तरफ रुजू करने वालों की इत्तेबा (तक़्लीद) ज़रूरी है। यह हुक्म भी आम है। क्योंकि आयत में कोई क़ैद नहीं।

(7) **तरजमा** : और वह जो अर्ज़ करते हैं कि ऐ हमारे रब हमको दे हमारी बीवियों और हमारी औलाद से आँखों में ठंडक और हमको परहेज़गारों का पेशवा बना।

इस आयत की तफ़्सीर में तफ़्सीर मुआलिमुत्तंज़ील में है **फ़नक़्तदी बिल-मुत्तक़ीना व यक़्तदी बिनल-मुत्तकून।** हम परहेज़गारों की पैरवी करें और परहेज़गार हमारी पैरवी करें।

इस आयत से भी मालूम हुआ कि अल्लाह वालों की पैरवी और उनकी तक़्लीद ज़रूरी है।

(8) **तरजमा** : तो क्यों न हुआ कि उनके हर गरोह में से एक जमाअत निकले कि दीन की समझ हासिल करें और वापस आकर अपनी क़ौम को डर सुनाएं इस उम्मीद पर कि वह बचें।

इस आयत से मालूम हुआ कि हर शख़्स पर मुज्तहिद बनना ज़रूरी नहीं। बल्कि कुछ तो फ़क़ीह बनें और कुछ दूसरों की तक़्लीद करें।

(9) **तरजमा** : और अगर इसमें रसूल और अम्र वाले लोगों की तरफ रुजू करते तो ज़रूर इनमें से उसकी हक़ीक़त जान लेते वह जो इस्तिंबात

है फरमाया कि रब ने फरमाया **फ़स्अलू अल-आयत।**

तफ़्सीर सावी सूरः कहफ़ **वज़्कुर रब्बेका इज़ा नसीता** की तफ़्सीर में है।

यानी चार मज़्हबों के सिवा किसी की तक़्लीद जाइज़ नहीं। अगरचे वह सहाबा के कौल और सहीह हदीस और आयत के मुवाफ़िक़ ही हो। जो इन चार मज़्हबों से ख़ारिज है वह गुमराह और गुमराह करने वाला है। क्योंकि हदीस व कुरआन के महज़ ज़ाहिरी मानी लेना कुफ़्र की जड़ है।

अहादीस : मुस्लिम जिल्द अव्वल सफः **54 बाब बयान इन्नद्दीना अन्नसीहतु** में है।

तरजमा : तमीम दारी से मरवी है कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने फरमाया कि दीन ख़ैर ख़्वाही है हमने अर्ज़ किया किस की? फरमाया अल्लाह की और उसकी किताब और उसके रसूल की और मुसलमानों के इमामों की और आम मोमिनीन की।

इस हदीस की शरह नुववी में है।

तरजमा : यह हदीस उन इमामों को भी शामिल है जो उलमा-ए-दीन हैं और उलमा की ख़ैर ख़्वाही से है उनकी रिवायत की हुई अहादीस का क़बूल करना और उनके अहकाम में तक़्लीद करना और उनके साथ नेक गुमान करना।

दूसरी फ़स्ल तक़्लीदे शख़्सी के बयान में

मिश्कात किताबुल-इमारह में बहवाला मुस्लिम है कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम फरमाते हैं।

तरजमा : जो तुम्हारे पास आवे हालांकि तुम एक शख़्स की इताअत पर मुत्तफ़िक़ हो वह चाहता हो कि तुम्हारी लाठी तोड दे और तुम्हारी जमाअत को मुतफ़र्रिक़ कर दे तो उसको क़त्ल कर दो। (सफ 320)

इसमें मुराद इमाम और उलमा-ए-दीन हैं क्योंकि हाकिमे वक़्त की इताअत ख़िलाफ़े शरअ् में जाइज़ नहीं है।

मुस्लिम ने **किताबुल-इमारह** में एक बाब बांधा **बाब वजूबे ताअतिल-अमराए फ़ी ग़ैरे मासियतिन** यानी अमीर की इताअत ग़ैर मासियत में वाजिब है इससे मालूम हुआ कि एक ही की इताअत ज़रूरी है।

मिश्कात शरीफ़ **किताबुल-बुयूअ बाबुल-फ़राइज़** में बरिवायते बुख़ारी है कि हज़रत अबू मूसा अशअरी ने हज़रत इब्ने मअऊद के बारे में **ला तस्अलूनी मादामा हाज़ल-हिबरू फ़ीकुम** जब तक कि यह अल्लामा तुम में रहें मुझसे मसाइल न पूछो मालूम हुआ कि अफ़ज़ल के होते हुए मफ़्ज़ूल की इताअत न करे और हर मुक़ल्लिद की नज़र में अपना इमाम अफ़ज़ल होता है।

फ़त्हुल-क़दीर में है।

तरजमा : जो शख़्स मुसलमानों की हुकूमत का मालिक हो फिर उन पर किसी को हाकिम बनाए हालांकि जानता हो कि मुसलमानों में इस से ज़्यादा मुस्तहिक़ और कुरआन व हदीस का जानने वाला है तो उसने अल्लाह व रसूल अलैहिस्सलाम और आम मुसलमानों की ख़्यानत की। मिश्कात **किताबुल-इमारह** फ़स्ल अव्वल में है **मन माता व लैसा फ़ी उनुक़िही बैअतुन माता मैतता जाहीलीयतिन** जो मर जाए हालांकि उसके गले में किसी की बैअत न हो, वह जहालत की मौत मरा। इसमें इमाम की बैअत यानी तक़्लीद और बैअते औलिया सब ही दाख़िल हैं। वरना बताओ फ़ी ज़माना हिन्दुस्तानी वहाबी किस सुल्तान की बैअत में हैं।

यह तो चन्द आयात व अहादीस थीं। इसके अलावा और भी पेश की जा सकती हैं। मगर इख़्तिसारन इसी पर क़नाअत की गई। अब उम्मत का अमल देखो तो तबा ताबईन के ज़माना से अब तक सारी उम्मते मरहूमा इसी तक़्लीद की आमिल है कि जो ख़ुद मुज्तहिद न हो, वह एक मुज्तहिद की तक़्लीद करे। और इज्मा-ए-उम्मत पर अमल करना कुरआन व हदीस से साबित है और ज़रूरी है। कुरआन फरमाता है।

तरजमा : और जो रसूल की मुख़ालिफ़त करे बाद इसके कि हक़ रास्ता उस पर खुल चुका और मुसलमानों की राह से जुदा रास्ता चले हम उसको उसकी हालत पर छोड़ देंगे और उसको दोज़ख़ में दाख़िल करेंगे और क्या ही बुरी जगह पलटने की है।

जिस से मालूम हुआ कि जो रास्ता आम मुसलमानों का हो उसको इख़्तियार करना फ़र्ज़ है और तक़्लीद पर मुसलमानों का इज्मा है।

मिश्कात बाबुल-एतसाम बिल–किताबे वस्सुन्नते सफ़: **30**, में है। **इत्तबे-उस्सवादल-आज़मा फ़इन्नहू मन शज़्ज़ा शुज़्ज़ा फ़िन्नारे** बड़े गरोह की पैरवी करो क्योंकि जो जमाअत मुस्लेमीन से अलग रहा वह अलग करके जहन्नम में भेजा जाएगा। और हदीस में आया है **मा रआहुल-मुमिनूना हसनन फ़हुवा इन्दल्लाहे हसनुन।** जिसको मुसलमान अच्छा जानें वह अल्लाह के नज़दीक भी अच्छा है। अब देखना यह है कि आज भी और इससे पहले भी आम मुसलमान तक़्लीदे शख़्सी ही को अच्छा जानते आए और मुक़ल्लिद ही हुए। आज भी अरब व अजम में मुसलमान तक़्लीदे शख़्सी ही करते हैं। और जो ग़ैर मुक़ल्लिद हुआ वह इज्मा का मुन्किर हुआ। अगर इज्तेमा का एतबार न करो तो ख़िलाफ़ते सिद्दीक़ी व फ़ारूक़ी किस तरह साबित करोगे। वह भी तो इज्माए उम्मत से ही साबित हुई। यहाँ तक कि जो शख़्स इन दोनों ख़िलाफ़तों में से किसी का भी इन्कार करे वह काफ़िर है। देखो शामी वग़ैरह। इसी तरह तक़्लीद पर भी इज्मा हुआ।

तफ़्सीर ख़ाज़िन ज़ेरे आयत **व कूनू मअस्सादेक़ीन** है कि अबू बकर रज़ि

फ़ज़ाइलुस्सहाबा सफ़: 554, में है **अस्हाबी कन्नुजूमे फ़बेअय्यिहिम इक़्तदैतुम इहतदैतुम** मेरे सहाबा सितारों की तरह हैं तुम जिनकी पैरवी करोगे हिदायत पा लोगे **अलैकुम बिसुन्नती व सुन्नतिल-ख़ुलफ़ाए अर्राशिदीन** (मिश्कात यही बाब) तुम लाज़िम पकड़ो मेरी और मेरे ख़ुलफ़ा-ए-राशिदीन की सुन्नत को। यह सवाल तो ऐसा है जैसे कोई कहे कि हम किसी के उम्मती नहीं। क्योंकि हमारे नबी अलैहिस्सलाम किसी के उम्मती न थे। तो उम्मती न होना सुन्नते रसूलुल्लाह है। इससे यही कहा जाएगा कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम ख़ुद नबी हैं। सब आपकी उम्मत हैं। वह किस के उम्मती होते। हमको उम्मती होना ज़रूरी है। ऐसे ही सहाब-ए-किराम तमाम मुसलमानों के इमाम हैं। उनका कौन मुसलमान इमाम होता।

नहर से पानी उस खेत को दिया जाएगा जो दरिया से दूर हो। मुकब्बेरीन की आवाज़ पर वही नमाज़ पढ़ेगा जो इमाम से दूर हो। लबे दरिया के खेतों को नहर की ज़रूरत नहीं। सफ़े अव्वल के मुक़्तदियों को मुकब्बेरीन की ज़रूरत नहीं सहाब-ए-किराम सफ़े अव्वल के मुक़्तदी हैं वह बिला वास्ता सीनए पाक मुस्तफ़ा अलैहिस्सलाम से फ़ैज़ लेने वाले हैं। हम चूंकि इस दरिया से दूर हैं। लिहाज़ा नहर के हाजत मन्द हैं। फिर समुन्द्र से हज़ारहा दरिया जारी होते हैं जिन सब में पानी तो समुन्द्र ही का है। मगर इन सब के नाम और रास्ते जुदा हैं। कोई गंगा कहलाता है कोई जमुना। ऐसे ही हुज़ूर अलैहिस्सलाम। आप रहमत के समुन्द्र हैं। इस सीना में से जो नहर इमाम अबू हनीफ़ा के सीना से होती हुई आई उसे हन्फ़ी कहा गया जो इमाम मालिक के सीना से आई। वह मज़्हब मालकी कहलाया। पानी सबका एक है मगर नाम जुदागाना। और इन नहरों की हमें ज़रूरत पड़ी। न कि सहाब-ए-किराम को जैसे कि हदीस की सनदें हमारे लिए है सहाब-ए-किराम के लिए नहीं।

सवाल : (2) रहबरी के लिए कुरआन व हदीस काफ़ी हैं। इनमें क्या नहीं जो कि फ़िक़्ह से हासिल करें कुरआन फ़रमाता है **व ला रतबिन वला याबिसिन इल्ला फ़ी किताबिम मुबीन।** और न है कोई तर और ख़ुश्क चीज़ जो एक रौशन किताब में लिखी न हो। और बेशक हमने कुरआन याद करने के लिए आसान फरमा दिया तो है कोई याद करने वाला। इन आयतों से मालूम हुआ कि कुरआन में सब है और कुरआन सब के लिए आसान भी है। फिर किस लिए मुज्तहिद के पास जावें?

जवाब : कुरआन व हदीस बेशक राहबरी के लिए काफ़ी हैं और इन में सब कुछ है मगर इन से मसाइल निकालने की क़ाबलीयत होना चाहिए। समुन्द्र में मोती हैं मगर उनको निकालने के लिए ग़ोता ख़ोर की ज़रूरत है। अइम्मा दीन इस समुन्द्र के ग़ोता ज़न हैं। तिब की किताबों में सब कुछ लिखा

है। इससे यह एतराज़ भी उठ गया कि अगर शाफ़ई रफ़ा यदैन करे तो ठीक है और अगर ग़ैर मुक़ल्लिद करे तो जुर्म है। क्योंकि शाफ़ई हाकिमे शरअ् मुज्तहिद से फ़ैसला करा कर रफ़ा यदैन कर रहा है। और अगर ग़लती करता है तो भी माफ़ है और चूंकि ग़ैर मुक़ल्लिद ने किसी मुज्तहिद से फ़सैला न कराया। लिहाज़ा अगर सही भी करता है तो भी ख़ताकार है। जैसे कि आज हाकिम के बग़ैर फ़ैसला कोई शख़्स ख़ुद ही क़ानून को हाथ में लेकर कोई काम करता है मुज्रिम है। लेकिन अगर हाकिम कचहरी से फ़ैसला करा कर वही काम किया तो उस पर जुर्म नहीं। हाकिम जवाब देह है। अगर हाकिम ने ग़लती की तो भी उसकी पकड़ नहीं। देखो हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने बदर के क़ैदियों से महज़ क़्यास पर फ़िदिया लिया। फिर आयत इसके ख़िलाफ़ आई। मालूम हुआ कि इस क़्यास से रब राज़ी नहीं मगर वह फ़िदिया का रुपया वापस न कराया गया। बल्कि इरशाद हुआ कि **फ़कुलू मिम्मा ग़निम्तुम हलालन तैय्यिबन** वह माल खा लो हलाल तैय्यिब, मालूम हुआ कि ख़ताए इज्तिहादी पर कोई पकड़ नहीं।

ख़ातिमा-क़्यास की बहस : में शरीअत के दलाइल चार हैं। कुरआन, हदीस इज्मा-ए-उम्मत और क़्यास। इज्मा के दलाइल तो हम ब्यान कर चुके कि कुरआन का भी हुक्म है और हदीस का भी कि आम जमाअते मुस्लेमीन के साथ रहो। जो इससे अलग हुआ वह जहन्नमी है।

क़्यास के माना लुग़त में अंदाज़ा लगाना और शरीअत में किसी फ़रई मसला को असल मसला से इल्लत और हुक्म में मिला देना यानी एक मसला ऐसा दर पेश आ गया जिसका सुबूत कुरआन व हदीस में नहीं मिलता तो उसकी तरह कोई वह मसला लिया जो कुरआन व हदीस में है। इसके हुक्म की वजह मालूम करके यह कहा कि चूंकि वह वजह यहाँ भी है लिहाज़ा उसका हुक्म यह है। जैसे किसी ने पूछा कि औरत के साथ इग़लाम करना कैसा है? हमने जवाब दिया कि हालते हैज़ में औरत से जिमा हराम है। क्यों? गंदगी की वजह से। और इसमें भी गंदगी है। लिहाज़ा यह भी हराम है। किसी ने पूछा कि जिस औरत से किसी के बाप ने ज़िना किया वह उसके लिए हलाल है या नहीं? हमने कहा कि जिस औरत से किसी का बाप निकाह करे वह बेटे को हराम है। वती या जुज़्ईयत की वजह से। लिहाज़ा यह औरत भी हराम है। इसको क़्यास कहते हैं। मगर शर्त यह है कि क़्यास करने वाला मुज्तहिद हो। हर कस व नाकस का क़्यास मोतबर नहीं। क़्यास असल में हुक्मे शरीअत को ज़ाहिर करने वाला है। ख़ुद मुस्तक़िल हुक्म का मुसीबत नहीं। यानी कुरआन व हदीस का ही हुक्म होता है। मगर क़्यास उसको यहाँ ज़ाहिर करता है। क़्यास का सुबूत कुरआन व हदीस व अफ़आले सहाबा से है। कुरआन फरमाता है। **फ़ातबेरू या ऊलिल-अब्सार** तो इबरत लो ऐ

है। इससे यह एतराज़ भी उठ गया कि अगर शाफ़ई रफ़ा यदैन करे तो ठीक है और अगर ग़ैर मुक़ल्लिद करे तो जुर्म है। क्योंकि शाफ़ई हाकिमे शरअ् मुज्तहिद से फ़ैसला करा कर रफ़ा यदैन कर रहा है। और अगर ग़लती करता है तो भी माफ़ है और चूंकि ग़ैर मुक़ल्लिद ने किसी मुज्तहिद से फ़सैला न कराया। लिहाज़ा अगर सही भी करता है तो भी ख़ताकार है। जैसे कि आज हाकिम के बग़ैर फ़ैसला कोई शख़्स ख़ुद ही क़ानून को हाथ में लेकर कोई काम करता है मुज्रिम है। लेकिन अगर हाकिम कचहरी से फ़ैसला करा कर वही काम किया तो उस पर जुर्म नहीं। हाकिम जवाब देह है। अगर हाकिम ने ग़लती की तो भी उसकी पकड़ नहीं। देखो हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने बदर के क़ैदियों से महज़ क़्यास पर फ़िदिया लिया। फिर आयत इसके ख़िलाफ़ आई। मालूम हुआ कि इस क़्यास से रब राज़ी नहीं मगर वह फ़िदिया का रुपया वापस न कराया गया। बल्कि इरशाद हुआ कि **फ़कुलू मिम्मा ग़निम्तुम हलालन तैय्यिबन** वह माल खा लो हलाल तैय्यिब, मालूम हुआ कि ख़ताए इज्तिहादी पर कोई पकड़ नहीं।

ख़ातिमा-क़्यास की बहस : में शरीअत के दलाइल चार हैं। कुरआन, हदीस इज्मा-ए-उम्मत और क़्यास। इज्मा के दलाइल तो हम ब्यान कर चुके कि कुरआन का भी हुक्म है और हदीस का भी कि आम जमाअते मुस्लेमीन के साथ रहो। जो इससे अलग हुआ वह जहन्नमी है।

क़्यास के माना लुग़त में अंदाज़ा लगाना और शरीअत में किसी फ़रई मसला को असल मसला से इल्लत और हुक्म में मिला देना यानी एक मसला ऐसा दर पेश आ गया जिसका सुबूत कुरआन व हदीस में नहीं मिलता तो उसकी तरह कोई वह मसला लिया जो कुरआन व हदीस में है। इसके हुक्म की वजह मालूम करके यह कहा कि चूंकि वह वजह यहाँ भी है लिहाज़ा उसका हुक्म यह है। जैसे किसी ने पूछा कि औरत के साथ इग़लाम करना कैसा है? हमने जवाब दिया कि हालते हैज़ में औरत से जिमा हराम है। क्यों? गंदगी की वजह से। और इसमें भी गंदगी है। लिहाज़ा यह भी हराम है। किसी ने पूछा कि जिस औरत से किसी के बाप ने ज़िना किया वह उसके लिए हलाल है या नहीं? हमने कहा कि जिस औरत से किसी का बाप निकाह करे वह बेटे को हराम है। वती या जुज़्ईयत की वजह से। लिहाज़ा यह औरत भी हराम है। इसको क़्यास कहते हैं। मगर शर्त यह है कि क़्यास करने वाला मुज्तहिद हो। हर कस व नाकस का क़्यास मोतबर नहीं। क़्यास असल में हुक्मे शरीअत को ज़ाहिर करने वाला है। ख़ुद मुस्तक़िल हुक्म का मुसीबत नहीं। यानी कुरआन व हदीस का ही हुक्म होता है। मगर क़्यास उसको यहाँ ज़ाहिर करता है। क़्यास का सुबूत कुरआन व हदीस व अफ़आले सहाबा से है। कुरआन फरमाता है। **फ़ातबेरू या ऊलिल-अब्सार** तो इबरत लो ऐ

तो हज़रत आदम को यह इल्म देकर उस्ताद न बनाया जाए।

(3) और दुनिया में सबसे बदतर चीज़ कुफ़्रे व शिर्क। मगर फ़ुक़हा फ़रमाते हैं कि इल्म हसद व बुग्ज़ और अल्फ़ाज़ कुफ़्रिया व शिर्किया का जानना फ़र्ज़ है ताकि इससे बचे। इसी तरह जादू सीखना फ़र्ज़ है दफ़ाए जादू के लिए। शामी के मुक़द्दमा में है।

यानी इल्मे रिया और हसद व हराम और कुफ़्रिया कल्मों का सीखना फ़र्ज़ है। और वल्लाह यह बहुत ही ज़रूरी है।

इसी मुक़द्दमा शामी बहस इल्मे नुजूम और रमल में फरमाते हैं। **वफ़ी ज़ख़ीरतिन्नाज़िरते तअल्लुमुहू फ़रज़ुन लेरद्दे साहिरिन अह्लिल-हर्बे** ज़ख़ीरा नाज़िरा में लिखा है कि जादू सीखना फ़र्ज़ है अह्ले हर्ब के जादू को दफ़ा करने के लिए। इह्या-उल-उलूम जिल्द अव्वल बाब अव्वल फ़स्ले सोम, बुरे उलूम के ब्यान में है इल्म की बुराई ख़ुद इल्म होने की वजह से नहीं बल्कि बन्दों के हक़ में तीन वज्हों से है।

इस बयान से बख़ूबी वाज़ेह हुआ कि नफ़्स इल्म किसी चीज़ का बुरा नहीं। अब मुन्केरीन का वह सवाल उठ गया कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम को बुरी चीज़ों जैसे चोरी, ज़िना, जादू, अशआर का इल्म नहीं था क्योंकि उनका जानना ऐब है। बताओ ख़ुदा को भी उनका इल्म है या नहीं? इसी लिए उन्होंने शैतान और मलकुल-मौत का इल्म हुज़ूर अलैहिस्सलाम से ज़्यादा माना। यह तो ऐसा हुआ जेसे मजूसी कहते हैं कि ख़ुदाए पाक बुरी चीज़ों का ख़ालिक़ नहीं है क्योंकि बुरी चीज़ों का पैदा करना भी बुरा है। **नऊज़ु बिल्लाह।** अगर इल्म जादू बुरा है तो उसकी तालीम के लिए रब की तरफ़ से दो फ़रिश्ते हारूत व मारूत क्यों ज़मीन पर उतरे, मूसा अलैहिस्सलाम के जादूगरों ने जादू के इल्म के ज़रिया से मूसा अलैहिस्सलाम की हक़्क़ानियत पहचानी और आप पर ईमान लाए। देखो इल्मे जादू ईमान का ज़रिया बन गया।

(2) सारे अंबिया और सारी मख़्लूक़ के उलूम हुज़ूर अलैहिस्सलाम को अता हुए। उसको मौलवी मुहम्मद क़ासिम साहब नानौतवी ने तहज़ीरुन्नास में माना है जिसके सारे हवाले आते हैं। तो जिस चीज़ का इल्म किसी मख़्लूक़ को भी है वह हुज़ूर अलैहिस्सलाम को ज़रूर है। बल्कि सबको जो इल्म मिला वह हुज़ूर अलैहिस्सलाम ही की तक़्सीम से मिला। जो इल्म शागिर्द उस्ताद से ले ज़रूरी है कि उस्ताद भी उसको जानने वाला हो। अंबिया में हज़रत आदम अलैहिस्सलाम भी हैं इसलिए हम हज़रत आदम व हज़रत ख़लीलुल्लाह अलैहिमस्सलाम के इल्म से भी बहस करेंगे।

(3) कुरआन और लौहे महफ़ूज़ में सारे वाक़यात **कुल मा काना वमा यकूनु** हैं और इस पर मलाइका और कुछ औलिया व अंबिया की नज़रें हैं।

और हर वक़्त वह हुज़ूर अलैहिस्सलाम के पेशे नज़र है। इसके हवाला भी आते हैं। इसी लिए हम लौहे महफ़ूज़ और कुरआनी उलूम का भी ज़िक्र कर देंगे। इसी तरह कातिबे तक़्दीर फ़रिश्ता के उलूम का भी ज़िक्र कर देंगे यह तमाम बहसें इल्मे मुस्तफ़ा अलैहिस्सलाम के साबित करने को होंगे।

तीसरी फ़स्ल

इल्मे ग़ैब के मुतअल्लिक़ अक़ीदा और इल्मे ग़ैब के मरातिब के बयान में

इल्मे ग़ैब की तीन सूरतें हैं और इनके अलग अलग अहकाम।

(अज़ ख़ालिसुल-एतक़ाद सफ़: 5)

(1) अल्लाह अज़्ज़ा व जल्ल आलिम बिज़्ज़ात है, उसके बग़ैर बताए कोई एक हर्फ़ भी नहीं जान सकता।

(2) हुज़ूर अलैहिस्सलाम और दीगर अंबिया-ए-किराम को रब तआला ने अपने कुछ ग़्यूब का इल्म दिया।

(3) हुज़ूर अलैहिस्सलाम का इल्म सारी ख़िल्क़त से ज़्यादा है, हज़रत आदम व ख़लील अलैहिमस्सलाम और मलकुल-मौत व शैतान भी ख़िल्क़त हैं। यह तीन बातें ज़रूरियाते दीन में से हैं। इनका इंकार कुफ़्र है।

(1) **क़िस्मे दोम** : औलिया-ए-किराम को भी बिल-वास्ता अंबिया-ए-किराम कुछ उलूमे ग़ैब मिलते हैं।

(2) अल्लाह तआला ने हुज़ूर अलैहिस्सलाम को पांच ग़ैबों में से बहुत से जुज़्इयात का इल्म दिया जो इस क़िस्म दोम का मुन्किर है वह गुमराह और बद मज़हब है कि सैकड़ों अहादीस का इंकार करता है।

(1) **क़िस्म सौम :** हुज़ूर अलैहिस्सलाम को क़यामत का इल्म मिला कि कब होगी।

(2) तमाम गुज़िश्ता और आइंदा वाक़यात जो लौहे महफ़ूज़ में हैं उनका बल्कि उन से भी ज़्यादा का इल्म दिया गया।

(3) हुज़ूर अलैहिस्सलाम को हक़ीक़ते रूह और कुरआन के सारे मुतशाबिहात का इल्म दिया गया।

चौथी फ़स्ल

जब इल्मे ग़ैब का मुन्किर अपने दावा पर दलील क़ायम करे तो चार बातों का ख़्याल रखना ज़रूरी है, **(इज़ाहतुल-ग़ैबे** सफ़ : **4)**

(1) वह आयत क़तईयुद्दलालह हो, जिसके माना में चन्द शक्लें न निकल सकती हों। और हदीस हो तो मुतवातिर हो।

(2) इस आयत या हदीस से इल्म के अता की नफ़ी हो कि हमने नहीं दिया। या हुज़ूर अलैहिस्सलाम फरमाएं। मुझको यह इल्म नहीं दिया गया।

(3) सिर्फ़ किसी बात का ज़ाहिर न फरमाना काफ़ी नहीं। मुम्किन है कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम को इल्म तो हो मगर किसी मस्लेहत से ज़ाहिर न किया हो। इसी तरह हुज़ूर अलैहिस्सलाम का यह फरमाना कि ख़ुदा ही जाने। अल्लाह के सिवा कोई नहीं जानता। या मुझे क्या मालूम, वग़ैरह काफ़ी नहीं। कि यह कलिमात कभी इल्मे ज़ाती की नफ़ी और मुख़ातब को ख़ामोश करने के लिए होते हैं।

(4) जिसके लिए इल्म की नफ़ी (इंकार) की गई हो वह वाक़या हो और क़्यामत तक का हो। वरना कुल सिफ़ाते इलाहिया और बाद क़्यामत के तमाम वाक़यात के इल्म का हम भी दावा नहीं करते। यह चार फ़स्लें ख़ूब ख़्याल में रखी जाएं।

पहला बाब

इल्मे ग़ैब के सुबूत के बयान में

इसमें छः फ़स्लें हैं। पहली फ़स्ल में आयाते कुरआनिया से सुबूत। दूसरी में अहादीस से सुबूत। तीसरी में अहादीस के शारेहीन के। चौथी में उलमा-ए-उम्मत और फुक़हा के अक़्वाल। पाँचवें में ख़ुद मुन्केरीन की किताबों से सुबूत। छठी में अक़्ली दलाइल और औलिया अल्लाह के इल्मे ग़ैब का बयान।

पहली फ़स्ल

आयाते कुरआनिया में

(1) व अल्लमा आदमल-अस्माआ कुल्लहा सुम्मा अरज़हुम अलल-मलाइकते। और अल्लाह तआला ने आदम को तमाम चीज़ों के नाम सिखाए, फिर सब चीज़ें मलाइका पर पेश कीं। तफ़सीर मदारिक में इसी आयत के मातहत है।

हज़रत आदम अलैहिस्सलाम को तमाम चीज़ों के नाम बताने के माना यह हैं कि रब ताआला ने उनको वह तमाम जिन्सें दिखा दीं जिसको पैदा किया है और उनको बता दिया कि इसका नाम घोड़ा और उसका नाम ऊँट और इसका नाम फुलां। हज़रत इब्ने अब्बास से मरवी है कि उनको हर चीज़ के नाम सिखा दिए। यहाँ तक कि प्याला और डोई के भी।

तफ़सीरे ख़ाज़िन में इसी आयत में यही मज़्मून बयान फरमाया, इतना और भी ज़्यादा फ़रमाया कहा गया है कि हज़रत आदम अलैहिस्सलाम को तमाम फ़रिश्तों के नाम सिखा दिए और कहा गया है कि उनकी औलाद के

के बयान हुए। बाक़ी अव्वल व आख़िर में सिफ़ाते इलाहिया हैं। इसमें फरमाया गया है, कि ख़ुदा तआला के पास कोई बग़ैर इजाज़त किसी की शफ़ाअत नहीं कर सकता, और जिनको शफ़ाअत की इजाज़त है वह हुज़ूर अलैहिस्सलाम हैं और शफ़ी के लिए ज़रूरी है कि गुनहगारों के अंजाम और उनके हालात से वाकिफ़ हो ताकि ना अह्ल की शफ़ाअत न हो जाए। और मुस्तहिके शफ़ाअत इससे महरूम न रह जाएं जैसे तबीब के लिए ज़रूरी है कि क़ाबिले इलाज और ला इलाज मरीज़ों को जाने तो फरमाया गया **यालमु मा बैना ऐदीहिम** और जिसको हमने शफ़ी बनाया है उसको तमाम का इल्म भी दिया है, क्योंकि शफ़ाअते कुबरा के लिए इल्मे ग़ैब लाज़िम है।

इससे मालूम हुआ कि जो कहते हैं कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम क़्यामत में मुनाफ़ेक़ीन को न पहचानेंगे या हुज़ूर अलैहिस्सलाम को अपनी भी ख़बर नहीं कि मेरा अंजाम क्या होगा महज़ ग़लत और बेदीनी है। जैसा कि आइंदा आता है। **वला युहीतूना बशैइन मिन इल्मेही इल्ला बेमा शाआ** और वह नहीं पाते उसके इल्म में से मगर जितना वह चाहे।

तफ़सीरे रूहुल-ब्यान में इसी आयत के मातहत है।

तरजमा : एहतमाल यह भी है कि इस ज़मीर से हुज़ूर अलैहिस्सलाम मुराद हों, यानी हुज़ूर अलैहिस्सलाम लोगों के हालात के मुशाहदा फरमाने वाले हैं और उनके सामने के हालात जानते हैं, उनके अख़लाक़, उनके मामलात, औन उनके क़िस्से वग़ैरह और उनके पीछे के हालात भी जानते हैं। आख़िरत के अहवाल, जन्नती, दोज़ख़ी लोगों के हालात और वह लोग हुज़ूर अलैहिस्सलाम के मालूमात में से कुछ भी नहीं जानते मगर इसी क़दर जितना कि हुज़ूर चाहें, औलिया अल्लाह का इल्म, इल्मुल अंबिया के सामने ऐसा है जैसे एक क़तरा सात समुन्द्रों के सामने और अंबिया का इल्म हुज़ूर अलैहिस्सलाम के इल्म के सामने इसी दरजा का है और हमारे हुज़ूर अलैहिस्सलाम का इल्म रब्बुल-आलमीन के इल्म के सामने इसी दरजा का। लिहाज़ा हर नबी और हर रसूल और हर वली अपनी-अपनी सलाहियत और क़ाबलीयत के मुताबिक़ हुज़ूर से ही लेते हैं, और किसी को यह मुम्किन नहीं कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम से आगे बढ़ जाए।

तफ़सीरे ख़ाज़िन में इसी आयत के मातहत है यानी –

तरजमा : यानी ख़ुदा तआला उनको अपने इल्म पर इत्तिला देता है और वह अंबिया व रसूल हैं ताकि उनका इल्म ग़ैब पर बाख़बर होना उनकी नबुव्वत की दलील हो जैसे रब ने फरमाया है कि पस नहीं ज़ाहिर फरमाता अपने ग़ैब ख़ास पर किसी को सिवाए उस रसूल के जिससे रब राज़ी है।

तफ़सीर मुआलिमुत्तंज़ील में इसी आयत के मातहत है यानी –

तरजमा : यानी यह लोग इल्मे ग़ैब को नहीं घेर सकते मगर जिस क़दर

ख़ास हैं किसी को मुत्तला (बाख़बर) नहीं फरमाता सिवाए बरगुज़ीदा रसूल के और जो ग़ैब कि रब से ख़ास नहीं उस पर ग़ैरे रसूल को भी मुत्तला (बाख़बर) फ़रमा देता है।

इस आयत और इन तफ़ासीर से मालूम हुआ कि ख़ुदाए क़ुद्दूस का ख़ास इल्मे ग़ैब हत्ता कि क़यामत का इल्म भी हुज़ूर अलैहिस्सलाम को अता फरमाया गया। अब क्या चीज़ है जो इल्मे मुस्तफ़ा अलैहिस्सलाम से बाक़ी रह गई।

(16) **फ़औहा इला अब्देही मा औहा।** अब वही फरमाई अपने बन्दे को जो वही फरमाई।

मदारिजुन्नबुव्वह जिल्द अव्वल वसल रूयते इलाही में है।

तरजमा : मेअराज में रब ने हुज़ूर अलैहिस्सलाम पर जो सारे उलूम और मारिफ़त और बशारतें और इशारे और ख़बरें और करामतें व कमालात वही फरमाए वह इस इबहाम में दाख़िल हैं और सबको शामिल हैं। उनकी ज़्यादती और अज़मत ही की वजह से उन चीज़ों को बतौर इबहाम ज़िक्र किया बयान न फरमाया। इसमें इस तरफ़ भी इशारा है कि उन उलूमे ग़ैबिया को सिवाए रब तआला और महबूब अलैहिस्सलाम के कोई नहीं एहाता कर सकता। हां जिस क़दर हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने ब्यान फरमाया वह मालूम है।

इस आयत और इबारत से मालूम हुआ कि मेअराज में हुज़ूर अलैहिस्सलाम को वह वह उलूम अता हुए जिनको न कोई ब्यान कर सकता है और न किसी के ख़्याल में आ सकते हैं। **मा काना वमा यकून** तो सिर्फ़ बयान के लिए है वरना उससे भी कहीं ज़्यादा की अता हुई।

(17) **वमा हुवा अलल-ग़ैबि बेज़नीन** और यह नबी ग़ैब बताने में बख़ील नहीं।

यह जब ही हो सकता है कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम को इल्मे ग़ैब हो और हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम लोगों को इससे मुत्तला फरमा देते हों।

मआलिमुत्तंज़ील यही आयत –

तरजमा : हुज़ूर अलैहिस्सलाम ग़ैब पर और आसमानी ख़बरों पर और उन ख़बरों और क़िस्सों पर बख़ील (कंजूस) नहीं हैं। मुराद यह है कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम के पास इल्मे ग़ैब आता है पस वह उसमें तुम पर बुख़्ल नहीं करते बल्कि तुमको सिखाते हैं और तुमको ख़बर देते हैं जैसे कि काहिन छुपाते हैं वैसे नहीं छुपाते।

ख़ाज़िन यही आयत –

यकूलु इन्नहू अलैहिस्सलामु यातीहे इल्मुल-ग़ैबि फ़ला यब्ख़लु बेही अलैकुम बल युअल्लेमुकुम। मुराद यह है कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम के पास इल्मे ग़ैब आता

जिसकी नेकियाँ तारों के बराबर हों फरमाया हां वह उमर हैं।

इससे मालूम हुआ कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को क़्यामत तक सारे लोगों के तमाम ज़ाहिरी और पोशीदा आमाल की पूरी ख़बर है और आसमानों के तमाम ज़ाहिर व पोशीदा तारों का भी तफ़्सीली इल्म है हालांकि बहुत से तारे अब तक फ़लासफ़ा को साइंसी आलात से मालूम न हो सके। हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने उन दोनों चीज़ों को मुलाहिज़ा फरमा कर फरमाया कि उमर की नेकियाँ तारों के बराबर हैं। दो चीज़ों की बराबरी या कमी बेशी वही बता सकता है जिसे दोनों चीज़ों का इल्म भी हो और मिक़्दार भी मालूम हो।

इनके अलावा और बहुत सी अहादीस पेश की जा सकती हैं मगर इख़्तिसारन इसी क़दर पर किफ़ायत की गई इन अहादीस से इतना मालूम हुआ कि तमाम आलम हुज़ूर अलैहिस्सलाम के सामने इस तरह है जैसे अपनी कफे दस्त (हाथ की हथेली)। ख़्याल रहे कि आलम कहते हैं मा सिवा अल्लाह को तो आलमे अजसाम, आलमे अरवाह, आलमे अम्र, आलमे इमकान, आलमे मलाइका, अर्श व फ़र्श ग़र्ज़कि हर चीज़ पर हुज़ूर अलैहिस्सला की नज़र है। और आलम में लौहे महफ़ूज़ भी है। जिसमें सारे हालात हैं। दूसरे यह मालूम हुआ कि अगले पिछले सारे वाक़ेआत पर भी इत्तिला रखते हैं तीसरे यह मालूम हुआ कि तारीक रातों में तनहाई के अन्दर जो काम किए जाएं वह भी निगाहे मुसतफ़ा अलैहिस्सलाम से पोशीदा नहीं। कि अब्दुल्लाह के वालिद हुज़ाफ़ा को बता दिया। चौथे यह मालूम हुआ कि कौन कब मरेगा, कहाँ मरेगा, किस हाल में मरेगा, काफिर या मोमिन, औरत के पेट में क्या है यह भी मेरे हुज़ूर अलैहिस्सलाम पर मख़्फ़ी (छुपा) नहीं। ग़र्ज़कि ज़र्रा-ज़र्रा और क़तरा-क़तरा इल्म में है। सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम।

तीसरी फ़स्ल

इल्म ग़ैब के बारे में शारेहीने अहादीस के अक़्वाल

(1) ऐनी शरह बुख़ारी फ़तहुल-बारी इरशादुस्सारी शरह बुख़ारी, मिरक़ात शरह मिश्कात में हदीस नम्बर 1 ५. मातेहत है।

इस हदीस में दलालत है कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने एक ही मज्लिस में सारी मख़्लूक़ात के सारे हालतों की शुरू से आख़िर तक की ख़बर दे दी।

(2) मिर्क़ात शरह मिश्कात और शरह शिफ़ा मुल्ला अली क़ारी व ज़रक़ानी शरह मवाहिब। नसीमुर्रियाज़ शरह शिफ़ा में हदीस नम्बर ४ में है।

इस हदीस का ख़ुलासा यह है कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम के लिए ज़मीन समेट दी गई और उसको ऐसा जमा फरमा दिया गया जैसे एक हाथ में आईना हो और वह शख़्स उस पूरे आईना को देखता हो। और ज़मीन को इस

तरह समेटा कि दूरे वाली को क़रीब कर दिया और उसके क़रीब की तरफ। यहाँ तक कि हमने देख लिया उन तमाम चीज़ों को जो ज़मीन में हैं।

(5) मिर्क़ात शरह मिश्कात में हदीस नम्बर 5 के मातहत है।

तरजमा : इस फैज़ के पहुँचने से हमने तमाम वह चीज़ें जान लीं और आसमानों और ज़मीन में हैं यानी आसमानों व ज़मीन में वह चीज़ें जो अल्लाह ने बताईं फरिश्ते और दरख़्त वग़ैरह यह आपके उस वसी इल्म का बयान है जो अल्लाह तआला ने आप पर ज़ाहिर फरमाया। इबने हजर ने फरमाया कि जान ली वह तमाम मख़्लूक़ात जो आसमानों (बल्कि जो उसके ऊपर है जैसा कि हदीसे मेअराज से मालूम होता है) और ज़मीन में है और तमाम वह चीज़ें जो सातों ज़मीन बल्कि जो उससे नीचे हैं जैसा कि इन हदीसों से मालूम होता है जिनमें हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने गाय और मछली की ख़बर दी है जिन पर ज़मीनें क़ायम हैं।

अश्इतुल-लमआत शरह मिश्कात में इसी हदीस नम्बर ५ के मातहत है तमाम जुज़ई व कुल्ली के इल्मों हासिल होने और उसके एहाता का ब्यान है।

(7) **अश्अतुल-लमआत** में हदीस नम्बर 7 के मातहत बयान फरमाया "हम पर हर क़िस्म का इल्म ज़ाहिर हो गया और हमने सबको पहचान लिया।

अल्लामा ज़रक़ानी शरह मवाहिब में इसी हदीस नम्बर 7 के मातहत फरमाते हैं।

तरजमा : यानी हमारे सामने दुनिया ज़ाहिर की गई और खोली गई कि हमने उसकी तमाम चीज़ों का एहाता (महसूस) कर लिया पस हम इस दुनिया को और जो कुछ इसमें क़्यामत तक होने वाला है इस तरह देख रहे हैं जैसे अपने इस हाथ को। इसमें इस तरफ इशारा है कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने हक़ीक़तन मुलाहिज़ा फरमाया। यह शक दफा हो गया कि नज़र से मुराद इल्म है।

(8) इमाम अहमद क़स्तलानी मवाहिब शरीफ़ में ज़ेरे हदीस नम्बर ८ फरमाते हैं।

इसमें शक नहीं कि अल्लाह ने हुज़ूर अलैहिस्सलाम को इससे भी ज़्यादा पर मुत्तला (बाख़बर) फ़रमाया और आपको सारे अगले पिछले हज़रात का इल्म दिया।

मुल्ला अली क़ारी मिर्क़ात में हदीस नम्बर १७ के तहत फरमाते हैं।

तुमको हुज़ूर अलैहिस्सलाम अगलों की गुज़री हुई ख़बरें देते हैं और जो कुछ तुम्हारे बाद पिछलों की ख़बरें हैं वह भी बताते हैं, दुनियावी हालात और आख़िरत के सारे हालात।

(१६) मिर्क़ात में हदीस नम्बर १६ के मा तहत फरमाते हैं।

इस हदीस में मोजज़ा होने के साथ ही साथ इस पर भी दलालत है कि

को कुंजी भी दी गई और आप के लिए फ़तहे बाब भी हुआ।

(4) **कुल ला यअलमु मन फ़िस्समावाते वल-अर्ज़िल-ग़ैबा इल्लल्लाह।** तुम फरमाओ ख़ुद ग़ैब नहीं जानते जो कुछ आसमानों और ज़मीन में हैं मगर अल्लाह।

इस आयत के भी मुफ़स्सेरीन ने दो मतलब बयान फरमाए। ग़ैब ज़ाती कोई नहीं जानता। कुल ग़ैब कोई नहीं जानता।

तफ्सीरे अनमूज़ज जलील में इसी आयत के मातहत है।

इस आयत के मानी यह हैं कि बग़ैर दलील या बग़ैर बताए या सारे ग़ैब ख़ुदा के सिवा कोई नहीं जानता।

तफ़्सीर मदारिक यही आयत –

ग़ैब वह है जिस पर कोई दलील न हो और किसी मख़्लूक़ को इस पर मुत्तला (बाख़बर) न किया गया हो।

मदारिक की इस तौजीह से मालूम हुआ कि इनकी इस्तेलाह में जो इल्म अताई हो वह ग़ैब ही नहीं कहा जाता। ग़ैब सिर्फ़ ज़ाती को कहते हैं। अब कोई अश्काल (परेशानी) ही नहीं रहा। जिन आयात में ग़ैब की नफी है वह इल्मे जाती की है।

इसी आयत के कुछ आगे है।

जिससे मालूम हुआ कि हर ग़ैब लौहे महफ़ूज़ या कुरआन में मौजूद है।

इमाम इब्ने हजर मक्की फताव–ए–हदीसिया में फरमाते हैं।

हमने इस आयत के बारे में जो कुछ कहा उसकी इमाम नुवी ने फ़तावा में तसरीह (खुलासा) की है। उन्होंने कहा कि ग़ैब मुस्तक़िल तौर पर और सारे मालूमाते इलाहिया को कोई नहीं जानता।

शरह **शिफ़ा ख़फ़फ़ाजी** में है।

तरजमा : यह कलाम इन आयात के ख़िलाफ़ नहीं जिनसे मालूम होता है कि ग़ैब ख़ुदा के सिवा कोई नहीं जानता क्योंकि नफ़ी बेवास्ता इल्म की है लेकिन अल्लाह की तालीम से जानना यह साबित है।

अगर इस आयत के यह मतलब न माने जाएं तो मुख़ालेफ़ीन के भी ख़िलाफ़ है क्योंकि वह भी बाज़ ग़ैबों का इल्म हुज़ूर अलैहिस्सलाम को मानते हैं और इसमें बिल्कुल की नफी है और उन्होंने शैतान व मलिकुल-मौत को इल्मे ग़ैब माना है। देखो बराहीने क़ातेआ सफ़ः **50**। फिर इस आयत का क्या मतलब बताएंगे। कुरआने करीम में है। **इनिल-हुक्मे इल्लल्लाह।** हुक्मे ख़ुदा के सिवा नहीं।

ख़ुदा की ही वह तमाम चीज़ें हैं जो आसमान व ज़मीन में हैं। **व कफ़ा बिल्लाहे शहीदा** अल्लाह काफी गवाह है **व कफ़ा बिल्लाहे वकीला।** अल्लाह काफी वकील है। **व कफ़ा बिल्लाहे हसीबा** अल्लाह काफी हिसाब

(6) बुख़ारी जिल्द अव्वल किताबुल-जनाइज़ सफ़: 166, में हज़रत उम्मुल-उला की रिवायत है। ख़ुदा की क़सम मैं नहीं जानता हालांकि मैं अल्लाह का रसूल हूँ कि मेरे साथ क्या किया जाएगा।

इससे मालूम हुआ कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम को अपनी भी ख़बर न थी कि क़यामत में मुझ से क्या मामला होगा।

जवाब : इस जगह इल्म की नफ़ी नहीं बल्कि दिरायतन की नफ़ी है यानी मैं अपने अटकल व क़्यास से नहीं जानता कि मेरे साथ क्या मामला होगा बल्कि इसका तअल्लुक़ वहि-ए-इलाही से है तो ऐ उम्मुल-उला तुम जो उस्मान इब्ने मज़्ऊन के जन्नती होने की गवाही महज़ क़्यास से दे रही हो यह मोतबर नहीं।

इसी ग़ैब की ख़बरों में तो अंबिया कराम भी क्यास नहीं फरमाते

जवाब : इस जगह इल्म की नफ़ी नहीं बल्कि दिरायतन की नफ़ी है यानी मैं अपने अटकल व क़्यास से नहीं जानता कि मेरे साथ क्या मामला होगा बल्कि इसका तअल्लुक़ वहि-ए-इलाही से है तो ऐ उम्मुल-उला तुम जो उस्मान इब्ने मज़्ऊन के जन्नती होने की गवाही महज़ क़्यास से दे रही हो यह मोतबर नहीं।

इसी ग़ैब की ख़बरों में तो अंबिया कराम भी क़्यास नहीं फरमाते। वरना मिश्कात **बाबु फ़ज़ाइले सैयदुल-मुरसलीन** में है कि हम औलादे आदम के सरदार हैं उस रोज़ **लिवा-उल-हम्द** हमारे हाथ में होगा आदम व आदमियान हमारे झण्डे के नीचे होंगे उनकी मुताबिक़त किस तरह की जाएगी।

(७) बुख़ारी जिल्द दोम किताबुल-मग़ाज़ी बाब हदीसे उफ़ुक में है कि हज़रत सिद्दीक़ा रज़ि अल्लाहु अन्हा को तोहमत लगी। आप उसमें परेशान तो रहे मगर बग़ैर वही आए हुए कुछ न फरमा सके कि यह तोहमत सही है या ग़लत अगर इल्मे ग़ैब होता तो परेशानी कैसी? और इतने रोज़ तक ख़ामोशी क्यों फरमाई।

जवाब : इसमें भी न बताना साबित है न कि न जानना। न बताने से न जानना लाज़िम नहीं आता। खुद रब ने भी बहुत रोज़ तक उनकी इसमत की आयात न उतारीं तो क्या रब को भी ख़बर न थी। और बुख़ारी की इस हदीस में है मैं अपनी बीवी की पाकदामनी ही जानता हूँ जिससे मालूम होता है कि इल्म है वक़्त से पहले इज़्हार नहीं। और यह तो हो सकता ही नहीं कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को हज़रत आइशा पर बदगुमानी हुई हो क्योंकि रब तआला ने मुसलमानों को इताबन फरमाया।

लौला इज समेअ्तुमूह ज़न्नल-मुमिनूना वल-मुमिनातु बेअंफ़ुसेहिम ख़ैरन व क़ालू हाज़ा इफ़्कुन मुबीन। यानी मुसलमान मर्दों व औरतों ने अपने दिलों में नेक गुमानी क्यों न की और फौरन क्यों न कहा कि यह खुला हुआ बुहतान है।

पता लगा कि नुज़ूले बराअत से पहले ही मुसलमानों पर नेक गुमानी वाजिब और बदगुमानी हराम थी। और नबी अलैहिस्सलातु वस्सलाम हराम से मासूम हैं। तो आप बदगुमानी हरगिज़ नहीं फरमा सकते। हाँ आपका फौरन यह फरमाना **हाज़ा इफ़्कुन मुबीन।** आप पर वाजिब न था क्योंकि आपके घर का मुआमला था। रही परेशानी और इतना सुकूत, यह क्यों हुआ? परेशानी की वजह मआज़ल्लाह ला इल्मी नहीं है। अगर किसी इज़्ज़त व अज़्मत वाले को ग़लत इल्ज़ाम लगा दिया जाए और वह ख़ुद जानता भी हो कि यह इल्ज़ाम ग़लत है। फिर भी अपनी बदनामी के अन्देशा पर परेशान होता है। लोगों में इस अफ़्वाह का फैलना ही परेशानी का बाइस हुआ। अगर आयात के नुज़ूल का इंतिज़ार न फरमाया जाता और पहले ही से इसमत का

देखा। इसलिए मानना होगा कि यहाँ नूरे नुबूव्वत से देखना मुराद है।

(11) कुरआने करीम जगह-जगह फरमाता है। **व इज़ क़ाला रब्बुका लिल-मलाइकते।** जबकि आपके रब ने फ़रिश्तों से कहा **व इज़ क़ाला मूसा लेक़ौमेही।** जबकि मूसा अलैहिस्सलाम ने अपनी क़ौम से कहा वग़ैरह वग़ैरह। इस जगह मुफ़स्सेरीन महज़ूफ़ निकालते हैं उज़्कुर यानी उस वाक़या को याद करो। और याद वह चीज़ दिलाई जाती है जो पहले से देखी भाली हो उधर तवज्जोह न हो। जिससे मालूम होता है कि यह तमाम गुज़िश्ता वाक़ेआत देखे हुए हैं।

रूहुल-बयान ने लिखा है कि हज़रत आदम के सारे वाक़ेआत हुज़ूर अलैहिस्सलाम मुशाहिदा फरमा रहे थे इसका ज़िक्र आगे आता है।

अगर कोई कहे कि बनी इसराईल से भी ख़िताब है। **इज़ नज्जैनाकुम मिन आले फ़िरऔना।** उस वक़्त को याद करो जबकि तुमको आले फ़िरऔन से नजात दी थी। तो हुज़ूर अलैहिस्सलाम के ज़माना के यहूदी उस ज़माना में कहाँ थे मगर मुफ़स्सेरीन यहाँ भी **उज़्कुरू** महज़ूफ़ निकालते हैं। जवाब दिया जाएगा कि उन बनी इसराईल को तारीख़ी वाक़ेआत मालूम थे कुतुबे तवारीख़ पढ़ी थीं। उस तरफ उनको मुतवज्जेह किया गया। हुज़ूर अलैहिस्सलाम ने न किसी से पढ़ा, न कुतुबे तवारीख़ का मुताला फरमाया और न किसी मुअर्रिख़ (तारीख़ लिखने वाले)की सोहबत में रहे, न तालीम याफ़्ता क़ौम में परवरिश पाई। अब आपको बजुज़ नूरे नुबूव्वत इल्म का ज़रिआ क्या था।

(12) नबी मुसलमानों से उनकी जानों से क़रीब हैं।

मौलवी क़ासिम साहब बानी मदरसा देवबन्द **तहज़ीरुन्नास** सफ़: **10** में लिखते हैं कि इस आयत में **औला** के मानी क़रीब तर तो आयत के माना हुए नबी मुसलमान से उनकी जान से भी ज़्यादा क़रीब हैं सबसे ज़्यादा क़रीब हम से हमारी जान और जान से ज़्यादा क़रीब नबी अलैहिस्सलाम हैं और ज़्यादा क़रीब चीज़ भी छुपी रहती है। इस ज़्यादती क़ुर्ब की वजह से आँख से नज़र नहीं आते।

तंबीह : इस जगह कुछ लोग कहते हैं कि तुम मुक़ल्लिद हो और मुक़ल्लिद को आयात या अहादीस से दलील लेना जाइज़ नहीं। वह तो क़ौले इमाम पेश करे लिहाज़ा तुम सिर्फ़ इमाम अबू हनीफ़ा रहमतुल्लाह अलैह के क़ौल ही पेश कर सकते हो इसका जवाब चन्द तरह से है। एक यह कि आप ख़ुद हाज़िर व नाज़िर न होने का अक़ीदा रखते हैं। इस बारे में इमाम साहब का क़ौल पेश करें। दूसरे यह कि तक़्लीद की बहस में अर्ज़ कर चुके हैं कि मसअल-ए-अक़ाइद में तक़्लीद नहीं होती, बल्कि मसाइले फ़ेक़्हीया इज्तिहादिया में होती है। यह मसला अक़ीदा है। तीसरे यह कि सरीह आयात व अहादीस से मुक़ल्लिद भी इस्तिदलाल कर सकता है हाँ उन से मसाइल का इस्तिंबात

करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को देखता है और यह बड़ी ही खुशख़बरी है।

क़स्तलानी शरह बुख़ारी जिल्द 3 सफः 390 **किताबुल-जनाइज़** में है। कहा गया है कि मैयत से हिजाब उठा दिए जाते हैं यहाँ तक कि नबी अलैहिस्सलाम को देखता है और यह मुसलमान के लिए बड़ी खुशख़बरी है अगर ठीक रहे।

कुछ लोग कहते हैं। कि **हाज़र्रजुलु** मअ़हूदे ज़ेहनी की तरफ इशारा है कि वह मुर्दा से पूछते हैं कि वह जो तेरे ज़ेहन में मौजूद हैं उन्हें तू क्या कहता था? मगर यह दुरुस्त नहीं। क्योंकि अगर ऐसा होता तो काफिर मैयत से यह सवाल न होता क्योंकि वह तो हुज़ूर अलैहिस्सलाम के तसव्वुर से ख़ालियुज़्ज़ेहन है। फिर काफिर इसके जवाब में यह न कहता। मैं नहीं जानता बल्कि पूछता कि तुम किसके बारे में सवाल करते हो? उसके ला अदरी कहने से मालूम होता है कि वह हुज़ूर को आँखों से देखता है। मगर पहचानता नहीं और यह इशारा ख़ार्जी (बाहरी) है।

इस हदीस और इबारतों से मालूम हुआ कि क़ब्र में हुज़ूर अलैहिस्सलाम का दीदार करा कर सवाल होता है कि तू इस शम्सुज़्ज़ुहा बदरुद्दुजा सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को जो तेरे सामने जलवा गर हैं क्या कहता था। **हाज़ा** इशारा क़रीब है। मालूम हुआ कि दिखा कर क़रीब करके फिर पूछते हैं। इसीलिए हज़राते सूफ़िया-ए-किराम और उश्शाक़ मौत की तमन्ना करते हैं और क़ब्र की पहली रात को दूल्हा के दीदार की रात कहते हैं। आला हज़रत फरमाते हैं –

जान तो जाते ही जाएगी क्यामत यह है
कि यहाँ मरने पे ठहरा है नज़ारा तेरा

मौलाना आसी फरमाते हैं –

आज फूले न समाएंगे कफ़न में आसी
जिसके जोयाँ थे है उस गुल की मुलाक़ात की रात

हमने अपने दीवान में अर्ज़ किया है –

मरक़द की पहली शब है दूल्हा की दीद का शब
उस शब के ईद सदक़े इसका जवाब कैसा

इसीलिए बुज़ुर्गाने दीन के विसाल के दिन को रोज़े उर्स कहते हैं। उर्स के मानी हैं शादी, क्योंकि **उरूस** यानी मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम दूल्हा के दीदार का दिन है।

और एक वक़्त में हज़ारों मुर्दे दफन होते हैं तो अगर हुज़ूर अलैहिस्सलाम हाज़िर व नाज़िर नहीं हैं तो हर जगह जलवा गरी कैसी? साबित हुआ कि हिजाब हमारी निगाहों पर है मलाइका इस हिजाब को उठा देते हैं जैसे कि

की ज़ियारत करने के लिए आलम में चक्कर लगाता है।

तफ़सीरे रूहुल-बयान सूरः मुल्क के आख़िर में है।

तरजमा : इमाम ग़ज़ाली ने फरमाया है कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम को दुनिया में सैर फरमाने का अपने सहाबा किराम की रूहों के साथ इख़्तियार है आपको बहुत से औलिया अल्लाह ने देखा है।

इंतिबाहुल-अज़्किया फ़ी हयातिल-औलिया में अल्लामा जलालुद्दीन सुयूती सफः 7 पर फरमाते हैं।

तरजमा : अपनी उम्मत के आमाल में निगाह रखना उनके लिए गुनाहों से इस्तिग़फ़ार करना उन से दफ़ए बला की दुआ फरमाना अतराफ़े ज़मीन में आना जाना इसमें बरकत देना और अपनी उम्मत में कोई सालेह आदमी मर जाए तो उसके जनाज़े में जाना यह चीज़ें हुज़ूर अलैहिस्सलाम का मश्ग़ला हैं जैसे कि इस पर अहादीस और आसार आए हैं।

इमाम ग़ज़ाली **अल-मुंक़िज़ु मिनज़्ज़लाले** में फरमाते हैं। "साहिबे दिल हज़रात जागते हुए अंबिया व मलाइका को देखते हैं और उन से बातचीत करते हैं।

इमाम जलालुद्दीन सुयूती शरह सुदूर में फरमाते हैं।

तरजमा : अगर लोग यह अक़ीदा रखें कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम की रूह और आपकी मिसाल मौलूद शरीफ़ पढ़ते में और ख़त्मे रमज़ान और नअ़त ख़्वानी करते वक़्त आती है तो जाइज़ है।

मौलवी अब्दुल-हई साहब रिसाला **तरावीहुल-जनान बेतशरीह हुक्मे शरबुद्दुख़ान** में फरमाते हैं कि एक शख़्स नअ़त ख़्वाँ था और हुक़्क़ा भी पीता था उसने ख़्वाब में देखा कि नबी अलैहिस्सलाम फरमाते हैं कि जब तुम मौलूद शरीफ़ पढ़ते हो तो हम रौनक़े अफ़्रोज़ मज्लिस होते हैं मगर जब हुक़्क़ा आ जाता है तो हम फौरन मज्लिस से वापस हो जाते हैं।

इन इबारात से मालूम हुआ कि हुज़ूर अलैहिस्सलाम की निगाहे पाक हर वक़्त आलम के ज़र्रा-ज़र्रा पर है और नमाज़, तिलावते कुरआन, महफ़िले मीलाद शरीफ़ और नअ़त ख़्वानी की मजालिस में इसी तरह सालेहीन की नमाज़े जनाज़ा में ख़ास तौर पर अपने जिस्म पाक से तशरीफ़ फरमा होते हैं।

तफ़सीर रूहुल–बयान पारा 26 सूरः फ़तह ज़ेरे आयत –

तरजमा : चूंकि हुज़ूर अलैहिस्सलाम अल्लाह की पहली मख़्लूक़ हैं इसलिए उसकी वहदानियत के गवाह हैं और उन चीज़ों को मुशाहदा करने वाले हैं जो अद्म से वजूद में आईं, अरवाह, नुफ़ूस, अजसाम, मअदनियात, नबातात, हैवानात, फ़रिश्ते और इंसान वग़ैरह ताकि आप पर रब के वह असरार और अजाइब मख़्फ़ी (छुपी) न रहें जो किसी मख़्लूक़ के लिए मुम्किन

में बदरज-ए-औला यह सिफ़त है।

(2) दुनिया में पानी और दाना हर जगह मौजूद नहीं बल्कि ख़ास-ख़ास जगह है। पानी तो कुएँ और तालाब व दरिया वग़ैरह में है दाना खेत या घरों वग़ैरह में। मगर हवा और धूप आलम के गोशा-गोशा में है कि फ़लासफ़ा के नज़्दीक खुला मुहाल (नामुमकिन) है हर जगह हवा है इसलिए कि हवा और रौशनी की हर वक़्त हर चीज़ को ज़रूरत है और हबीबे ख़ुदा अलैहिस्सलातु वस्सलाम की हर मख़्लूके इलाही को हर वक़्त ज़रूरत है जैसा कि हम रूहुल-बयान वग़ैरह के हवाला से साबित कर चुके। तो लाज़िम है कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की हर जगह जल्वागरी हो।

(3) हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम तमाम आलम की असल हैं **व कुल्लुल-ख़ल्क़े मिन नूरी** और असल का अपनी फ़रा में माद्दा का सारे मुश्तक़्क़ात में एक का सारे अददों में रहना ज़रूरी है।

दूसरा बाब

मसअला

हाज़िर व नाज़िर पर ऐतराज़ात के बयान में

(१) हर जगह हाज़िर व नाज़िर होना ख़ुदा की सिफ़त है। **अला कुल्ले शैइन शहीद। बेकुल्ले शैइन मुहीत** लिहाज़ा ग़ैर में यह सिफ़त मानना शिर्क फ़िस्सिफ़त है।

जवाब : हर जगह हाज़िर व नाज़िर होना ख़ुदा की सिफ़त हरगिज़ नहीं। ख़ुदाए पाक जगह और मकान से पाक है। कुतुबे अक़ाइद में है। **ला यजरी अलैहि ज़मानुन वला यश्तमिलु अलैहि मकानुन।** ख़ुदा पर न ज़माना गुज़रे क्योंकि ज़माना सुफ़्ला जिस्मों पर ज़मीन में रह कर गुज़रता है। उन्हीं की उम्र होती है। चाँद, सूरज, तारे, हूर व ग़िल्मां, फ़रिश्ते बल्कि आसमान पर ईसा अलैहिस्सलाम, मेअराज में हुज़ूर अलैहिस्सलाम ज़माना से अलाहिदा हैं और न कोई जगह ख़ुदा को घेरे ख़ुदा तआला हाज़िर है मगर बग़ैर जगह के। इसीलिए **सुम्मस्तवा अलल-अर्शे** को मुतशाबेहात से माना गया है और **बेकुल्ले शैइन मुहीत** वग़ैरह आयात में मुफ़स्सेरीन फरमाते हैं **इल्मन व कुदरतन** यानी अल्लाह का इल्म और उसकी कुदरत आलम को घेरे हुए है।

वही ला मकां के मकीं हुए सरे अर्श तख़्त नशीं हुए
वह नबी हैं जिनके हैं यह मकां वह ख़ुदा है जिसका मकां नहीं

ख़ुदा को हर जगह में मानना बेदीनी है। हर जगह में होना तो रूसले ख़ुदा ही की शान है और अगर मान भी लिया जाए तो भी हुज़ूर अलैहिस्सलाम की यह सिफ़त अताई, हादिस मख़्लूक़ क़ब्ज़ए इलाही में है और ख़ुदा की यह

ऐयुहन्नबीयु या ऐयुहर्रसूलु या ऐयुहल-मुज़्ज़म्मिल या ऐयुहल-मुदस्सिर। वग़ैरह प्यारे अल्क़ाबात से पुकारा। हालांकि वह रब है तो हम ग़ुलामों को क्या हक़ है कि उनको बशर या भाई कह कर पुकारें।

(5) कुरआने करीम ने कुफ़्फ़ारे मक्का का यह तरीक़ा बताया है कि वह अंबिया को बशर कहते थे **क़ालू मा अंतुम इल्ला बशरुन मिस्लुना।** काफिर बोले नहीं हो तुम मगर हम जैसे बशर **लइन अतअ़तुम बशरन मिस्लुकुम इन्नकुम इज़ल-लख़ासिरून।** अगर तुमने अपने जैसे बशर की पैरवी की तो तुम नुक़्सान वाले हो वग़ैरह वग़ैरह।

इस क़िस्म की बहुत सी आयात हैं इसी तरह बराबरी बताना या अंबिया किराम की शान घटाना तरीक़ए इब्लीस है कि उसने कहा **ख़लक़्तनी मिन नारिन व ख़लक़्तहू मिन तीनिन।** ख़ुदाया तूने मुझे आग से और उनको मिट्टी से पैदा फरमाया। मतलब यह कि मैं उन से अफ़्ज़ल हूँ। इसी तरह अब यह कहना कि हम में और पैग़म्बरों में क्या फ़र्क़ है हम भी बशर वह भी बशर बल्कि हम ज़िन्दा वह मुर्दे। यह सब इब्लीसी कलाम हैं।

दूसरा बाब

मसअलए बशरीयत पर ऐतराज़ात के बयान में

(1) कुरआन फरमाता है। **कुल इन्नमा अना बशरुन मिस्लुकुम।** ऐ महबूब फरमा दो कि मैं तुम जैसा बशर हूँ।

इस आयते कुरआनिया से मालूम हुआ कि हुज़ूर भी हमारी तरह बशर हैं अगर नहीं हैं तो आयत मआ़ज़ल्लाह झूठी हो जाएगी।

जवाब : इस आयत में चन्द तरह ग़ौर करना लाज़िम है। एक यह कि फरमाया गया है **कुल** ऐ महबूब आप फरमा दो। तो यह कलिमा फरमाने की सिर्फ़ हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम को इजाज़त है कि आप बतौर इंकिसार व तवाज़ु फरमा दें। यह नहीं कि **कूलू इन्नमा हुवा बशरुन मिस्लुना।** ऐ लोगो! तुम कहा करो कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम हम जैसे बशर हैं बल्कि कुल में इस जानिब इशारा है कि बशर वग़ैरह कलिमात तुम कह दो हम तो न कहेंगे हम तो फरमाएंगे। **या ऐयुहल-मुज़म्मिल या ऐयुहल-मुदस्सिर** वग़ैरह हम तो आपकी शान बढ़ाएंगे आप इंकिसारन यह फरमा सकते हैं। और इस आयत में कुफ़्फ़ार से ख़िताब है चूंकि हर चीज़ अपनी ग़ैर जिन्स से नफरत करती है लिहाज़ा फरमाया गया कि ऐ कुफ़्फ़ार तुम मुझ से घबराओ नहीं मैं तुम्हारी जिन्स से हूँ यानी बशर हूँ।

शिकारी जानवरों की सी आवाज़ निकाल कर शिकार करता है। इस से कुफ़्फ़ार को अपनी तरफ मायल करना मक़्सूद है। अगर देवबन्दी भी कुफ़्फ़ार

और जिब्रील और मुत्तक़ी मुसलमान हैं। बाद में फ़रिश्ते उनके मददगार हैं। फरमाता है।

तरजमा : यानी ऐ मुसलमानों तुम्हारा मददगार अल्लाह और रसूल और वह मुसलमान हैं जो ज़कात देते हैं नमाज़ पढ़ते हैं। फरमाता है **वल-मुमिनूना वल-मुमिनातु बाज़ुहुम औलियाओ बाज़िन।** दूसरी जगह फरमाता है **नहनु औलियाउकुम फ़िल-हयातिद्दुनिया व फ़िल-आख़िरते।** मालूम हुआ कि रब तुम्हारा भी मददगार और मुसलमान भी आपस में एक दूसरे के। मगर रब तआला बिज़्ज़ात मददगार और यह बिल-अर्ज़।

मूसा अलैहिस्सलाम को जब तबलीग़ के लिए फिरऔन के पास जाने का हुक्म हुआ। तो अर्ज़ किया।

ख़ुदाया मेरे भाई को नबी बना कर मेरा वज़ीर कर दे मेरी पुश्त को उनको मदद से मज़्बूत कर दे। रब तआला ने यह न फरमाया कि तुमने मेरे सिवा का सहारा क्यों लिया मैं काफी नहीं। बल्कि उनकी दरख़्वास्त मंज़ूर फरमा ली। मालूम हुआ कि बन्दों का सहारा बनना सुन्नते अंबिया है।

मिश्कात **बाबुस्सुजूद व फ़ज़्लेही** में रबीआ इब्ने कअब अस्लमी से बरिवायत मुस्लिम हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने मुझसे फरमाया।

तरजमा : कुछ माँग लो मैंने कहा कि मैं आपसे जन्नत में आपकी हमराही माँगता हूँ। फरमाया कुछ और माँगना है। मैंने कहा सिर्फ़ यही, फरमाया कि अपने नफ़्स पर ज़्यादा नवाफ़िल से मेरी मदद करो।

इससे साबित हुआ कि हज़रत रबीआ ने हुज़ूर से जन्नत माँगी। तो यह न फरमाया कि तुमने ख़ुदा के सिवा मुझसे जन्नत माँगी तुम मुश्रिक हो गए। बल्कि फरमाया वह तो मंज़ूर है कुछ और भी माँगो। यह ग़ैरे ख़ुदा से मदद माँगना है फिर लुत्फ़ यह है कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम भी फरमाते हैं आनी ऐ रबीआ तुम भी इस काम में मेरी इतनी मदद करो कि ज़्यादा नवाफिल पढ़ा करो। यह भी ग़ैरुल्लाह से तलबे मदद है।

सवाल को मुतलक़ फरमाने से कि फरमाया कि कुछ माँग लो। किसी ख़ास चीज़ से मुक़ैयद न फरमाया। मालूम होता है कि सारा मुआमला हुज़ूर ही के प्यारे हाथ में है। जो चाहें जिसको चाहें अपने रब के हुक्म से दे दें। क्योंकि दुनिया व आख़िरत आप ही की सख़ावत से है और लौह व क़लम का इल्म आपके उलूम का एक हिस्सा है अगर दुनिया व आख़िरत की ख़ैर चाहते हो तो उनके आस्ताने पर आओ और जो चाहो माँग लो।

खानए काबा में 360 बुत रहे और तीन सौ साल तक रहे। फिर हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के ज़रिया काबा पाक हुआ। रब तआला ने बता

दिया कि जब मेरा घर काबा बग़ैर मेरे महबूब की इम्दाद के पाक नहीं हो सकता तो तुम्हारा दिल उनकी नज़रे करम के बग़ैर पाक नहीं हो सकता।

नूरुल-अनवार के ख़ुतबा में ख़ल्क़ की बहस में है। **हुवल-जूदु बिल-कौनैने वत्तवज्जोहु इला ख़ालेक़ेहिमा।** यानी दोनों जहान औरों को बख़्श देना और ख़ुद ख़ालिक़ की तरफ मुतवज्जेह हो जाना हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम का ख़ुल्क़ है और ज़ाहिर है दोनों जहान दूसरों को वही बख़्शेगा जो ख़ुद उनका मालिक होगा मिल्कीयत साबित हुई।

शैख़ अब्दुल-हक़ की इस इबारत ने फ़ैसला कर दिया कि दुनिया व आख़िरत की तमाम नेअमतें हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम से माँगो। औलाद माँगो, माल माँगो, जन्नत माँगो, जहन्नम से पनाह माँगो। बल्कि अल्लाह को माँगो। एक सूफ़ी शाइर ख़ूब फरमाते हैं।

या रसूलल्लाह मैं आप से अल्लाह को माँगता हूँ
और ऐ अल्लाह मैं तुझसे रसूलुल्लाह को माँगता हूँ

हज़रत क़िब्लए आलमे मुहद्दिस अली पूरी दामा ज़िल्लहुम ने फरमाया कि रब तआला फरमाता है।

इसका तरजमा है कि अगर यह लोग अपनी जानों पर ज़ुल्म करके आपकी बारगाह में आ जाते फिर ख़ुदा से अपनी मग़्फ़िरत माँगते और यह रसूल भी उनके लिए दुआ-ए-मग़्फ़िरत करते तो यह लोग आपके पास अल्लाह को पा लेते। मगर किस शान में **तौवाबन रहीमा** तौबा क़बूल फरमाने वाला मेहरबान यानी आपके पास आने से उनको ख़ुदा मिल जाता।

अल्लाह को भी पाया मौला तेरी गली में

अश्इतुल्लम्आत की तरह मिर्क़ात शरह मिश्कात में इसी हदीस के मातहत फरमाया है। **फ़युअ़ती लेमन शाआ मा शाआ।** हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम जिसको जो चाहें दे दें। तफ़सीरे कबीर जिल्द सोम पारा 7 सूरः इंआम ज़ेरे आयत –

तरजमा : तीसरे उनमें अंबिया हैं यह वह हज़रात हैं जिनको रब ने उलूम और और मआरिफ़ इस क़दर दिए हैं जिन से वह मख़्लूक़ की अन्दरूनी हालत और उनकी रूहों पर तसर्रुफ़ कर सकते हैं और उनको इस क़द्र कुदरत व कुव्वत दी है जिससे मख़्लूक़ के ज़ाहिर पर तसर्रुफ़ कर सकते हैं।

इसी तफ़सीरे कबीर पारा **अलम वइज़ क़ाला रब्बुका लिल-मलाइकते** की तफ़सीर में है कि अब्दुल्लाह बिन अब्बास रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु से रिवायत है कि जो कोई जंगल में फंस जाए तो कहे **अईनूनी इबादल्लाहे यरहमुकमुल्लाह** ऐ अल्लाह के बन्दो मेरी मदद करो रब तुम पर रहम

फरमाए। तफ़्सीरे रूहुल-ब्यान सूरः माइदा पारा 6 ज़ेरे आयत **व यस्ऊना फ़िल-अर्ज़े फ़सादा।** कि शैख़ सलाहुद्दीन फरमाते हैं कि मुझको रब ने कुदरत दी है कि मैं आसमान को ज़मीन पर गिरा दूँ। अगर मैं चाहूँ तो तमाम दुनिया वालों को हलाक कर दूँ अल्लाह की कुदरत से लेकिन हम इस्लाह की दुआ करते हैं। मसनवी शरीफ़ में है।

औलिया को अल्लाह से यह कुदरत मिली है
कि छूटा हुआ तीर वापस करें

अश्इतुल्लम्आत शुरूअ **बाब ज़ियारतिल-कुबूर** में है।

इमाम ग़ज़ाली ने फरमाया कि जिससे ज़िन्दगी में मदद माँगी जाती है उस से उनकी वफ़ात के बाद भी मदद माँगी जाए एक बुज़ुर्ग ने फरमाया कि चार शख़्सों को हमने देखा कि वह क़ब्रों में भी वही अमलदर आमद करते हैं जो कि ज़िन्दगी में करते थे या ज़्यादा। एक जमाअत कहती है कि ज़िन्दा की मदद ज़्यादा मज़बूत है और मैं कहता हूँ कि मुर्दा की मदद ज़्यादा मज़बूत। औलिया की हुकूमत जहानों में है और यह नहीं हैं मगर उनकी रूहों को अरवाह बाक़ी में। हाशियाए मिश्कात **बाब ज़ियारतिल-कुबूर** में है।

नबी अलैहिस्सलाम व दीगर अंबिया-ए-किराम के अलावा और अह्ले कुबूर से दुआ माँगने का बहुत से फुक़हा ने इंकार किया और मशाइख़े सूफ़िया और कुछ फुक़हा ने इसको साबित किया है इमाम शाफ़ई फरमाते हैं कि मूसा काज़िम की क़ब्र कबूलियते दुआ के लिए आज़मूदा तिरयाक़ है और इमाम मुहम्मद ग़ज़ाली ने फरमाया कि जिस से ज़िन्दगी में मदद माँगी जा सकती है उससे बाद वफ़ात भी मदद माँगी जा सकती है। इस इबारत से मालूम हुआ कि नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम व दीगर अंबिया-ए-किराम से मदद माँगने में तो किसी का इख़्तिलाफ़ नहीं। कुबूर औलिया अल्लाह से मदद माँगने में इख़्तिलाफ़ है। उलमा-ए-ज़ाहेरीन ने इंकार किया सूफ़िया किराम और फुक़हा अह्ले कश्फ़ ने जाइज़ फरमाया।

हिस्ने हिसीन सफ़: 202 में है।

जब मदद लेना चाहे तो कहे कि अल्लाह के बन्दो मेरी मदद करो ऐ अल्लाह के बन्दो मेरी मदद करो ऐ अल्लाह के बन्दो मेरी मदद करो।

इसकी शरह **अल-हरज़ुस्समीन** में मुल्ला अली क़ारी इसी जगह फरमाते हैं।

यानी जंगल में किसी का जानवर भाग जाए तो आवाज़ दे कि ऐ अल्लाह के बन्दो उसे रोक लो। इबादल्लाह के मातहत फरमाते हैं।

बलग़नी अन्नहू क़द अहदसा फइन काना अहदसा फ़ला तुक़्रेओ मिन्निस्सलामा। मुझे ख़बर मिली कि वह बिदअती हो गया है अगर ऐसा हो तो उसको मेरा सलाम न कहना। बिदअती कैसे हुआ? फरमाते हैं। **यकूलु यकूनु फ़ी उम्मती ख़स्फुन व मस्ख़ुन औ क़ज़्फुन फ़ी अहलिल-क़द्रे।** हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम फरमाते थे कि मेरी उम्मत में ज़मीन धंसना, सूरत बदलना, या पत्थर बरसना होगा क़दरीया लोगों में। मालूम हुआ कि वह क़दरीया यानी तक़्दीर का मुन्किर हो गया था। उसको बिदअती फरमाया। दुर्रे मुख़्तार **किताबुस्सलात बाबुल-इमामत** में है **व मुब्नदइन ऐ साहिबे बिदअतिन वहिया ऐतेक़ादु ख़िलाफ़िल-मारूफ़े अनिर्रसूले।** बिदअती इमाम के पीछे नमाज़ मक्रूह है। बिदअत इस अक़ीदे के ख़िलाफ़ ऐतक़ाद रखना है जो कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम से मारूफ़ हैं। इन इबारात से मालूम हुआ कि बिदअत नए और बुरे अक़ाइद को भी कहते हैं और बिदअत और बिदअती पर जो सख़्त वईदें अहादीस में आई हैं उन से मुराद बिदअते ऐतक़ादिया है। हदीस में है कि जिसने बिदअती की ताज़ीम की उसने इस्लाम के ढाने पर मदद दी यानी बिदअते ऐतक़ादिया वाले की। फ़तावा रशीदीया जिल्द अव्वल **किताबुल-बिदआत** सफः 90 में है "जिस बिदअत में ऐसी शदीद वईद है, वह बिदअत फ़िल अक़ाइद है, जैसा कि रवाफ़िज़े ख़्वारिज की बिदअत है।"

बिदअते अमली हर वह काम है जो कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के ज़मानए पाक के बाद ईजाद हुआ ख़्वाह वह दुनियावी हो या दीनी ख़्वाह सहाबा किराम के ज़माना में हो या उसके भी बाद। मिर्क़ात **बाबुल-ऐतसाम** में है। **व फ़िश्शरअ अहदासु मालम यकुन फ़ी अहदे रसूलुल्लाहे अलैहिस्सामु।** बिदअते शरीअत में उस काम का ईजाद करना है जो कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के ज़माना में न हो। अश्इतुल्लम्आत यही बाब जो काम हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के बाद पैदा हो वह बिदअत है।

इन दोनों इबारतों में न तो दीनी काम की क़ैद है न ज़माना सहाबा का लिहाज़ जो काम भी हो दीनी हो या दुनियावी हुज़ूर अलैहिस्सिलातु वस्सलाम के बाद जब भी हो ख़्वाह ज़माना सहाबा में या उसके बाद वह बिदअत है। हाँ उर्फ़े आम में ईजादात सहाबा किराम को सुन्नते सहाबा कहते हैं बिदअत नहीं बोलते यह उर्फ़ है वरना ख़ुद फ़ारूक़े आज़म रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु ने तरावीह की बाक़ायदा जमाअत मुक़र्रर फरमा कर फरमाया। **नेअ़मल-बिदअते हाज़ेही** यह तो बहुत ही अच्छी बिदअत है।

बिदअते अमली दो क़िस्म है। बिदअते हसना और बिदअते सैयआ। बिदअते हसना वह नया काम जो कि किसी सुन्नत के ख़िलाफ़ न हो जैसे

महफ़िले मीलाद और दीनी मदारिस और नए-नए उम्दा खाने और प्रेस में कुरआन व दीनी कुतुब का छपवाना और बिदअत सैयआ वह जो कि किसी सुन्नत के ख़िलाफ़ हो या सुन्नत को मिटाने वाली हो जैसे कि गैर अरबी में ख़ुतबा, जुमा व ईदैन पढ़ना या कि लाउडिस्पीकर पर नमाज़ पढ़ना कि इसमें सुन्नते ख़ुतबा यानी अरबी में होना और तबलीग़ तक्बीर की सुन्नत उठ जाती है। यानी बज़रिया मुकब्बेरीन के आवाज़ पहुँचाना बिदअते हसना जाइज़ बल्कि किसी वक़्त मुस्तहब और वाजिब भी है। और बिदअते सैयआ मक्रूहे तंज़ीही या मक्रूहे तहरीमी या हराम है। इस तक़्सीम को हम आइन्दा बयान करेंगे। बिदअते हसना और बिदअते सैयआ की दलील सुनो। अश्इतुल्लम्आत जिल्द अव्वल **बाबुल-ऐतसाम** ज़ेरे हदीस **व कुल्लु बिदअतिन ज़लालतिन** है।

जो बिदअत कि उसूल और क़वानीन और सुन्नत के मुवाफ़िक़ है और उससे क़्यास की हुई है उसको बिदअते हसना कहते हैं और जो कि उसके ख़िलाफ़ है उसको बिदअते गुम्राही कहते हैं।

मिश्कात **बाबुल-इल्म** (स० 33) में है।

तरजमा : जो कोई इस्लाम में अच्छा तरीक़ा जारी करे उसको इसका सवाब मिलेगा और उनका भी जो कि उस पर अमल करेंगे और उनके सवाब से कुछ कम न होगा और जो शख़्स कि इस्लाम में बुरा तरीक़ा जारी करे उस पर उसका गुनाह भी है और उनका भी जो कि उस पर अमल करें और उनके गुनाह में भी कुछ कमी न होगी। मालूम हुआ कि इस्लाम में कारे ख़ैर ईजाद करना सवाब का बाइस है और बुरे काम निकालना गुनाह का मूजिब।

शामी के मुक़द्दमा में फ़ज़ाइल इमाम अबू हनीफ़ा बयान फरमाते हुए फरमाते हैं।

तरजमा : उलेमा फ़रमाते हैं कि यह हदीसें इस्लाम के क़ानून हैं कि जो शख़्स कोई बुरी बिदअत ईजाद करे उस पर उस काम में सारी पैरवी करने वालों का गुनाह है। और जो शख़्स कि अच्छी बिदअत निकाले उसको क़्यामत तक के सारे पैरवी करने वालों का सवाब है। इससे भी मालूम हुआ कि अच्छी बिदअत सवाब है और बुरी बिदअत गुनाह है।

बुरी बिदअत वह है जो सुन्नत के ख़िलाफ़ हो। इसकी भी दलील मुलाहिज़ा हो। मिश्कात **बाबुल-ऐतसाम** (स० 27) में है। **मन अहदसा फ़ी अम्रेना हाज़ा मा लैसा मिन्हु फ़हुवा रद्दुन।** जो शख़्स हमारे इस दीन में कोई ऐसी राय निकाले जो कि दीन से नहीं है वह मरदूद है। दीन से नहीं है के माना यह हैं कि दीन के ख़िलाफ़ है चुनांचे अश्इतुल्लम्आत में इसी हदीस की शरह में है इस से मुराद वह चीज़ है जो कि दीन के ख़िलाफ़ या दीन को

होती हैं जैसे कि इल्मे फ़िक़्ह व उसूले फ़िक़्ह या कुरआने करीम का जमा करना या कुरआने करीम में ज़बर–ज़ेर लगाना या आजकल कुरआने करीम का छापना और दीनी मदरसों में तालीम के कोर्स वग़ैरह बनाना।

बिदअत की क़िस्मों की पहचानें और अलामतें

बिदअते हसना और सैयआ की पहचान तो बता दी गई कि जो बिदअत इस्लाम के ख़िलाफ़ हो या किसी सुन्नत को मिटाने वाली हो वह बिदअते सैयआ। और जो ऐसी न हो वह बिदअते हसना है। अब इन पाँच क़िस्मों की अलामतें मालूम करो।

बिदअते जाइज़ : हर वह नया काम जो शरीअत में मना न हो और बग़ैर किसी नीयते ख़ैर के किया जाए जैसे चन्द खाने खाना वग़ैरह इसका हवाला मिर्क़ात और शामी से गुज़र गया। इन कामों पर न सवाब न अज़ाब।

बिदअते मुस्तहब्बा : वह नया काम जो शरीअत में मना न हो और उसको आम मुसलमान कारे सवाब जानते हों या कोई शख़्स उसको नीयते ख़ैर से करे जैसे महफ़िले मीलाद शरीफ़ और फ़ातिहाए बुज़ुर्गान कि आम मुसलमान इसको कारे सवाब जानते हैं इसको करने वाला सवाब पाएगा और न करने वाला गुनहगार नहीं होगा। दलाइल मुलाहिज़ा हों।

मिर्क़ात **बाबुल-ऐतसाम** में है।

हज़रत इब्ने मसऊद से मरवी है कि जिस काम को मुसलमान अच्छा जानें वह अल्लाह के नज़्दीक भी अच्छा है और हदीसे मरफ़ू में है कि मेरी उम्मत गुम्राही पर मुत्तफ़िक़ न होगी। मिश्कात के शुरू में है। **इन्नमल-आमालु बिन्नियाते व इन्नमा लेअम्रेइन मा नवा।**

आमाल का मदार नीयत से है और इंसान के लिए वही है जो नीयत करे। दुर्रे मुख़्तार जिल्द अव्वल बहस मुस्तहब्बाते वुज़ू में है।

तरजमा : मुस्तहब वह कलाम है जो हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने कभी किया हो और कभी छोड़ा हो और वह काम कि गुज़िश्ता मुसलमान अच्छा जानते हों।

शामी जिल्द पंजुम बहस कुरबानी में है। **फ़इन्ननियाते तज्अलुल-आदाते इबादाते।** क्योंकि नीयते ख़ैर आदात को इबादत बना देती है। इसी तरह मिर्क़ात बहस नीयत में भी है।

इन अहादीस व फ़िक़्ही इबारतों से मालूम हुआ कि जो जाइज़ काम नीयते सवाब से किया जाए मुसलमान उसको सवाब का काम जानें वह इन्दल्लाह भी कारे सवाब है। मुसलमान अल्लाह के गवाह हैं जिसके अच्छे होने की गवाही दें वह अच्छा है और जिसको बुरा कहें वह बुरा। गवाही की

नफ़ीस बहस हमारी किताब शाने हबीबुर्रहमान में देखो और उस किताब में भी उर्स बुज़ुर्गान की बहस में कुछ इसका ज़िक्र आएगा। इंशाअल्लाह।

बिदअते वाजिबा : वह नया काम जो शरअन मना न हो और उसके छोड़ने से दीन में हरज वाक़े हो जैसे कि कुरआन के ज़बर–ज़ेर और दीनी मदारिस और इल्मे नह्व वगै़रह पढ़ना इसके हवाले गुज़र चुके।

बिदअते मक्रूहा : वह नया काम जिससे कोई सुन्नत छूट जाए अगर सुन्नते गै़र मोअक्किदा छूटी तो यह बिदअते मक्रूहे तंज़ीही है और अगर सुन्नते मोअक्किदा छूटी तो यह बिदअते मक्रूहे तहरीमी। इसकी मिसालें और हवाले गुज़र गए।

बिदअते हराम :– वह नया काम जिस से कोई वाजिब छूट जाए यानी वाजिब को मिटाने वाली हो।

दुर्रे मुख़्तार **बाबुल-अज़ान** में है कि अज़ान के बाद सलात व सलाम करना 781 हिज. में ईजाद हुआ। लेकिन वह बिदअते हसना है। इसके मातहत शामी में अज़ान जौक़ के बारे में फ़रमाते हैं।

इससे मालूम हुआ कि जो जाइज़ काम मुसलमानों में मुरव्वज हो जाए बाइसे सवाब है।

आओ हम आपको दिखाएं कि इस्लाम की कोई इबादत हसना से खाली नहीं। फ़ेहरिस्त मुलाहिज़ा हो।

ईमान : मुसलमान के बच्चा-बच्चा को ईमाने मुज्मल और ईमान मुफ़स्सल याद कराया जाता है। ईमान की यह दो क़िस्में और उनके यह दोनों नाम बिदअत हैं कुरूने सलासा (पहले तीन ज़माने) में इसका पता नहीं।

कलिमा : हर मुसलमान छः कलिमा याद करता है यह छेः कलिमे उनकी तादाद उनकी तर्तीब कि यह पहला कलिमा है यह दूसरा और उनके यह नाम हैं सब बिदअत हैं। जिनका कुरूने सलासा में पता भी नहीं था।

कुरआन : कुरआन शरीफ़ के तीस पारा बनाना, इनमें रूकूअ क़ायम करना, इस पर ज़बर–ज़ेर लगाना, इसकी सुनहरी रू पहली जिल्दें तैयार करंना, कुरआन को ब्लाक वगै़रह बना कर छापना सब बिदअत हैं, जिनका कुरूने सलासा में ज़िक्र भी न था।

हदीस : हदीस को किताबी शक्ल में जमा करना, हदीस की सनदें बयान करना, अस्नाद पर जिरह करना और हदीस की सहीह क़िस्में बनाना कि यह सहीह है। यह हसन, यह ज़ईफ़, यह मुअज़्ज़ल, यह मुदल्लस, इन क़िस्मों में तर्तीब देना कि अव्वल नम्बर सहीह है, दोम नम्बर हसन, सोम नम्बर ज़ईफ़, फिर उनके अहकाम मुक़र्रर करना कि हराम व हलाल चीज़ें हदीसे सहीह से साबित होंगी। और फ़ज़ाइल में हदीसे ज़ईफ़ भी मोतबर होगी। ग़र्ज़ेकि सारा फन्ने हदीस ऐसी बिदअत है जिसका कुरूने सलासा में ज़िक्र भी न था।

उसूले हदीस : यह फ़न बिल्कुल बिदअत है बल्कि इसका तो नाम भी बिदअत है। इसके सारे क़ायदे क़ानून बिदअत।

फ़िक़ह : इस पर आजकल दीन का दारोमदार है। मगर यह भी अज़ अव्वल ता आख़िर बिदअत है। जिसका कुरूने सलासा में ज़िक्र नहीं।

उसूले फ़िक़ह व इल्मे कलाम : यह इल्म भी बिल्कुल बिदअत हैं इनके क़वाइंद व ज़वाबित सब बिदअत।

नमाज़ : नमाज़ में ज़बान से नीयत करना बिदअत, जिसका सुबूत कुरूने सलासा में नहीं। रमज़ान में बीस तरावीह पर हमेशगी करना बिदअत है, ख़ुद अमीरुल-मुमिनीन उमर रज़ि अल्लाहु तआला अन्हु ने फरमाया। **नेअ़मतिल-बिदअतु हाज़ेही** यह बड़ी अच्छी बिदअत है।

रोज़ा : रोज़ा इफ़्तार करते वक़्त ज़बान से दुआ करना। **अल्लाहुम्मा लका सुम्तु** अलख़ और सहरी के वक़्त दुआ माँगना कि **अल्लाहुम्मा बिस्सौमे लका ग़दन नवैतु** बिदअत है।

ज़कात : ज़कात में मौजूदा सिक्का राइजुल-वक़्त अदा करना बिदअत है। कुरूने सलासा में यह तस्वीर वाले सिक्के न थे न उन से ज़कात जैसी इबादत अदा होती थी मौजूदा सिक्के से गल्लों से फ़ितरा निकालना यह सब बिदअत हैं।

हज : रेल गाड़ियों, लारियों, मोटरों, हवाई जहाज़ों के ज़रिया हज करना, मोटरों में अरफ़ात शरीफ़ जाना बिदअत है, उस ज़मानए पाक में न यह सवारियाँ थी न उनके ज़रिया हज होता था।

तरीक़त : तरीक़त के क़रीबन सारे मशाग़िल और तसव्वुफ़ के क़रीबन सारे मशाग़िल बिदअत हैं। मुराक़बे, चिल्ले, पास अन्फ़ास, तसव्वुरे शैख़, ज़िक्र के अक़्साम सब बिदअत हैं। जिनका कुरूने सलासा में कहीं पता नहीं चलता।

चार सिलसिले : शरीअत व तरीक़त दोनों के चार-चार सिलसिले यानी हनफ़ी, शाफ़ई, मालिकी, हंबली, इसी तरह क़ादरी, चिश्ती, नक़्शबन्दी, सुहरवर्दी यह सब सिलसिले बिल्कुल बिदअत हैं। इन में से कुछ के तो नाम तक भी अरबी नहीं। जैसे चिश्ती या नक़्शबन्दी, कोई सहाबी, ताबई, हनफ़ी, क़ादरी न हुए।

अब देवबन्दी बताएं कि बिदअत से बच कर वह दीनी हैसियत से ज़िन्दा भी रह सकते हैं? जब ईमान और कलिमा में बिदआत दाख़िल हैं तो बिदअत से छुटकारा कैसा?

दुनियावी चीज़ें : आजकल दुनिया में वह चीज़ें ईजाद हो गई हैं। जिनका ख़ैरुल-कुरून में नाम व निशान भी न था। और जिनके बग़ैर अब दुनियावी ज़िन्दगी मुश्किल है। हर शख़्स उनके इस्तेमाल पर मज्बूर है। रेल, मोटर, हवाई जहाज़, समुन्द्री जहाज़, तांगा, घोड़ा गाड़ी, फिर ख़त, लिफ़ाफ़ा,

शाफ़ई के नज़्दीक यही मसला है कि असल जायज़ होता है उसकी तफ़्सीर ख़ाज़िन **व रूहुल-ब्यान** और तफ़्सीर **ख़ज़ानुल-इरफ़ान** वग़ैरह ने भी तसरीह की है कि हर चीज़ में असल यही है कि वह जायज़ है मुमानिअत से नाजाइज़ होगी। अब जो बाज़ लोग अह्ले सुन्नत से पूछते हैं कि अच्छा बताओ कहाँ लिखा है कि मीलाद शरीफ़ करना जाइज़ है। या हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने या सहाबा किराम या ताबईन या तबा ताबईन ने कब किया था। यह महज़ धोखा है। अह्ले सुन्नत को चाहिए कि उन से पूछें कि बताओ कहाँ लिखा है कि मीलाद शरीफ़ करना हराम है। जब ख़ुदा हराम न करे रसूल अलैहिस्साम मना न फरमाएं और किसी से मुमानेअत साबित न हो तो तुम किस दलील से हराम कहते हो। बल्कि मीलाद शरीफ़ वग़ैरह का सुबूत न होना जाइज़ होने की अलामत है। रब तआला फरमाता है।

इन आयात से मालूम हुआ कि हुर्मत की दलील न मिलना हलाल होने की दलील है न कि हराम होने की। यह हज़रात इस से हुर्मत साबित करते हैं अजीब उलटी मंतिक़ है। अच्छा बताओ कि रेल में सफर, मदारिस का क़्याम, कहाँ लिखा है? कि हलाल है या किसी सहाबी या ताबई ने किया जैसे वह हलाल ऐसे ही यह भी जाइज़ और हलाल है।

बहस 9 महफ़िले मीलाद शरीफ़ के बयान में

इस बहस में दो बाब हैं। पहला बाब मीलाद शरीफ़ के सुबूत में। दूसरा बाब इस पर ऐतराज़ात व जवाबात में।

मीलाद शरीफ़ के सुबूत में

अव्वलन तो मालूम होना चाहिए कि मीलाद शरीफ़ की हक़ीक़त क्या है? और इसका हुक्म क्या? फिर यह जानना ज़रूरी है कि इसके दलाइल क्या हैं? मीलाद शरीफ़ की हक़ीक़त है हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की विलादत पाक का वाक़ेया बयान करना। हमल शरीफ़ के वाक़ेआत, नूरे मुहम्मदी के करामात, नसब नामा या शीर ख़्वार्गी और हज़रत हलीमा रज़ि अल्लाहु अन्हा के यहाँ परवरिश हासिल करने के वाक़ेआत बयान करना और हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की नअ़त पाक नज़्म या नसर में पढ़ना सब इसके ताबे हैं। अब वाक़ेया विलादत ख़्वाह तंहाई में पढ़ो या मज्लिस जमा करके और नज़्म में पढ़ो या नस्र में खड़े हो कर या बैठ कर जिस तरह भी हो इसको मीलाद शरीफ़ कहा जाएगा। महफ़िले मीलाद शरीफ़ मुनअक़िद करना और विलादते पाक की ख़ुशी मनाना, उसके ज़िक्र के मौक़ा पर ख़ुश्बू लगाना, गुलाब छिड़कना, शीरनी तक़्सीम करना, ग़र्ज़ेकि ख़ुशी का इज़्हार जिस जाइज़ तरीक़ा से हो वह मुस्तहब और बहुत ही बाइसे बरकत और रहमते इलाही के नुज़ूल का सबब है।

ईसा अलैहिस्सलाम ने दुआ की थी **रब्बना अंज़िल अलैना माइदतन मिनस्समाइ तकूनु लना ईदन लेअव्वलेना व आखेरेना।** मालूम हुआ कि माइदा आने के दिन को हज़रत मसीह अलैहिस्सलाम ने ईद का दिन बनाया। आज भी इतवार को ईसाई इसी लिए ईद मनाते हैं कि उस दिन दस्तरख़्वान उतरा था और हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की तशरीफ़ आवरी इस माइदा से कही बढ़ कर नेअमत है लिहाज़ा उनकी विलादत का दिन भी **यौमुल-ईद** है। हाँ इस मज्लिसे पाक में हराम काम करना सख़्त जुर्म और गुनाह है। जैसे औरतों का इस क़दर बुलन्द आवाज़ से नअ़त शरीफ़ पढ़ना कि अजनबी मर्द सुनें सख़्त मना है, औरत की आवाज़ अजनबी मर्द को सुनना जाइज़ नहीं। अगर कोई मर्द नमाज़ की हालत में किसी को सामने निकलने से रोके तो आवाज़ से सुब्हानल्लाह कह दे लेकिन अगर औरत किसी को रोके तो सुब्हानल्लाह न कहे बल्कि बाएं हाथ की पुश्त पर दाहिना हाथ मारे। जिस से मालूम हुआ कि औरत नमाज़ में ज़रूरत के वक़्त भी किसी को अपनी आवाज़ न सुनाए इसी तरह मीलाद शरीफ़ में बाजे के साथ नअत ख़्वानी करना बहुत ही गुनाह है कि यह बाजा खेल कूद और लग़्वियात में से है। वैसे भी बाजा से खेलना हराम है। और ख़ास नअ़त ख़्वानी जो कि इबादत है इसको बाजे पर इस्तेमाल करना और भी जुर्म है। अगर किसी जगह मीलाद शरीफ़ में यह ख़राबियाँ पैदा कर दी गई हों तो उन ख़राबियों को दूर किया जाए लेकिन अ़सल मीलाद शरीफ़ को बन्द न किया जाए। अगर औरत बुलन्द आवाज़ से कुरआन की तिलावत करे या लोग कुरआन बाजे से पढ़ने लगें तो इन बेहूदगियों को मिटा दो। कुरआन पढ़ना न रोको क्योंकि यह इबादत है।

मीलाद शरीफ़ कुरआन व अहादीस व अक़्वाले उलमा और मलाइका और पैग़म्बरों के फ़ेअ़ल से साबित है कुरआने करीम में इरशाद हुआ (१) रब तआला फ़रमाता है **वज़्कुरू नेअ़मतल्लाहे अलैकुम।** और हुज़ूर की तशरीफ़ आवरी अल्लाह की बड़ी नेअमत है। मीलाद पाक में उसी का ज़िक्र है लिहाज़ा महफ़िले मीलाद करना इस आयत पर अमल है।

(2) व अम्मा बेनेअ़मते रब्बिका फ़हद्दिस। अपने रब की नेअ़मतों का ख़ूब चर्चा करो और हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की दुनिया में तशरीफ़ आवरी तमाम नेअ़मतों से बढ़ कर नेअमत है कि रब तआला ने उस पर एहसान जताया है कि उसका चर्चा करना उसी आयत पर अमल है। आज किसी के फ़रज़न्द पैदा हो तो हर साल तारीख़े पैदाइश पर साल गिरह का जश्न करता है किसी को सलतनत मिले तो हर साल इस तारीख़ पर जश्ने जुलूस मनाता है तो जिस तारीख़ को दुनिया में सबसे बड़ी नेअमत आई उस पर ख़ुशी

बकरियाँ चराना, उनका निकाह, उनको नुबुव्वत मिलना सब कुछ बयान फ़रमाया, यही बातें मीलादे पाक में होती हैं।

मदारिजुन्नबुव्वह वग़ैरह ने फरमाया कि सारे पैग़म्बरों ने अपनी-अपनी उम्मतों को हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की तशरीफ़ आवरी की ख़बरें दीं। हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम का फरमान तो कुरआन ने भी नक़्ल फरमाया **व मुबश्शिरन बेरसूलिन याती मिन बअदिस्मुहू अहमदु।** मैं ऐसे रसूल की खुशख़बरी देने वाला हूँ जो मेरे बाद तशरीफ़ लाएंगे उनका नाम पाक अहमद है। सुब्हानल्लाह बच्चों के नाम पैदाइश के सातवें रोज़ माँ बाप रखते हैं मगर विलादत पाक से 570 साल पहले मसीह अलैहिस्सलाम फरमाते हैं कि उनका नाम अहमद है। होगा न फरमाया। मालूम हुआ कि उनका नाम पाक रब तआला ने रखा। कब रखा? यह तो रखने वाला जाने।

यह भी मीलाद शरीफ़ है, सिर्फ़ फ़र्क़ इतना हुआ कि उन हज़रात ने अपनी क़ौम के मज्मओं में फरमाया कि वह तशरीफ़ लाएंगे हम अपने मजमों में कहते हैं कि वह तशरीफ़ ले आए हैं, फ़र्क़ माज़ी व मुस्तक़्बिल का है बात एक ही है। साबित हुआ कि मीलाद सुन्नते अंबिया भी है।

रब तआला फरमाता है। **कुल बेफ़ज़्लिल्लाहे व बेरहमतेही फ़बेज़ालिका फल्यफ़्रहू।** यानी अल्लाह के फ़ज़्ल व रहमत पर ख़ूब खुशियाँ मनाओ। मालूम हुआ कि फ़ज़्ले इलाही पर ख़ुशी मनाना हुक्मे इलाही है और हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम रब का फ़ज़्ल भी हैं और रहमत भी। लिहाज़ा उनकी विलादत पर खुशी मनाना इसी आयात पर अमल है और चूंकि यहाँ ख़ुशी मुतलक़ है लिहाज़ा हर जाइज़ ख़ुशी इसमें दाख़िल। लिहाज़ा महफ़िले मीलाद करना वहाँ की ज़ेब व ज़ीनत सज धज वग़ैरह सब बाइसे सवाब हैं।

(4) मवाहिबे लदुनिया और मदारिजुन्नबुव्वह वग़ैरह में ज़िक्रे विलादत में है कि शबे विलादत में मलाइका ने आमना ख़ातून रज़ि अल्लाहु अन्हा के दरवाज़े पर खड़े हो कर सलात व सलाम अर्ज़ किया। हाँ अज़्ली रांदा हुआ शैतान रंज व ग़म में भागा भागा फिरा। इससे मालूम हुआ कि मीलाद सुन्नत मलाइका भी है। और यह भी मालूम हुआ कि बवक़्ते पैदाइश खड़ा होना मलाइका का काम है। और भागा भागा फिरना शैतान का फेअल। अब लोगों को इख़्तियार है कि चाहे तो मीलाद पाक के ज़िक्र के वक़्त मलाइका के काम पर अमल करें या शैतान के।

(5) ख़ुद हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने मज्मए सहाबा के सामने मिंबर पर खड़े होकर अपनी विलादत पाक और अपने औसाफ़ बयान फ़रमाए। जिससे मालूम हुआ कि मीलाद पढ़ना सुन्नते रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम भी है। चुनांचे मिश्कात जिल्द दोम **बाब फ़ज़ाइले**

सैयदुल-मुरसलीन फ़स्ले सानी में स० : **513** हज़रत अब्बास रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि एक दिन हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुआ। शायद हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम तक ख़बर पहुँची थी कुछ लोग हमारे नसब पाक में तअन करते हैं। **फ़क़ामन्नबीयु सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम अलल-मिंबरे फ़क़ाला मन अना।** पस मिंबर पर क़्याम फरमा कर पूछा बताओ मैं कौन हूँ? सबने अर्ज़ किया कि आप रसूलुल्लाह हैं, फरमाया मैं मुहम्मद इब्ने अब्दुल्लाह इब्ने अब्दुल-मुत्तलिब हूँ। अल्लाह ने मख़्लूक़ को पैदा फरमाया तो हम को बेहतरीन मख़्लूक़ में से किया फिर उनके दो हिस्से किए अरब व अजम। हमको उनमें से बेहतर यानी अरब में से किया फिर अरब के चन्द क़बीले फरमाए। हमको उनके बेहतर यानी कुरैश में से किया। फिर कुरैश के चन्द खानदान बनाए। हमको उन में से सबसे बेहतर खानदान यानी बनी हाशिम में से किया। इसी मिश्कात इसी फ़स्ल में है कि हम ख़ातमुन्नबीयीन हैं और हम हज़रत इब्राहीम की दुआ हज़रत ईसा की बशारत और अपनी वालिदा का दीदार हैं। जो कि उन्होंने हमारी विलादत के वक़्त देखा कि उन से एक नूर चमका जिससे शाम की इमारतें उनको नज़र आईं। उनमें हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने अपना नसब नामा अपनी नअ़त शरीफ़ अपनी विलादत पाक का वाक़ेया बयान फ़रमाया। यही मीलाद शरीफ़ में होता है। ऐसी सैकड़ों अहादीस पेश की जा सकती हैं।

(6) सहाब-ए-किराम एक दूसरे के पास जा कर फरमाइश करते थे कि हमको हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की नअत शरीफ़ सुनाओ। मालूम हुआ कि मीलाद सुन्नते सहाबा भी है। चुनांचे मिश्कात **बाब फ़ज़ाइले सैयदुल-मुरसलीन** फ़स्ले अव्वल में है कि हज़रत अता इबने यसार फरमाते हैं कि मैं अब्दुल्लाह इब्ने अमर इब्ने आस रज़ि अल्लाहु अन्हु के पास गया और अर्ज़ किया कि मुझे हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की वह नअत सुनाओ जो कि तौरेत शरीफ़ में है उन्होंने पढ़ कर सुनाई। इसी तरह हज़रत कअबे अहबार फरमाते हैं कि हम हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की नअत पाक तौरेत में यूं पाते हैं। मुहम्मद अल्लाह के रसूल होंगे, मेरे पसन्दीदा बन्दे हैं न कज ख़ुल्क़, न सख़्त तबीअत, उनकी विलादत मक्का मुकर्रमा में और उनकी हिजरत मदीना तैयबा में, उनका मुल्क शाम में होगा, उनकी उम्मत ख़ुदा की बहुत हम्द करेगी कि रंज व ख़ुशी हर हाल में ख़ुदा की हम्द करेगी। (मिश्कात बाब फ़ज़ाइल सैयदुल-मुरसलीन)।

(7) यह तो मक़्बूल बन्दों का ज़िक्र था। कुफ़्फ़ार ने भी विलादत पाक की ख़ुशी मनाई। तो कुछ न कुछ फ़ाइदा हासिल ही कर लिया। चुनांचे बुख़ारी

लिहाज़ा महफ़िले मीलादे पाक मुस्तहब है।

आख़िर **मज्मउल-बहार** सफ़ः **550** में है कि शैख़ मुहम्मद ज़ाहिर मुहद्दिस रबीउल-अव्वल के मुतअल्लिक़ फरमाते हैं।

फ़इन्नहू शहरू उमिरना बिज़्हारिले जबूरे फ़ीहे कुल्ला आमिन

तरजमा : मालूम हुआ कि रबीउल-अव्वल में हर साल ख़ुशी मनाने का हुक्म है।

तफ़सीर रूहुल-बयान पारा 26 सूरः फ़तह ज़ेरे आयत **मुहम्मदुर-रसूलुल्लाह** है।

तरजमा : मीलाद शरीफ़ करना हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की ताज़ीम है जबकि वह बुरी बातों से ख़ाली हो। इमाम सुयूती फरमाते हैं कि हमको हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम की विलादत पर शुक्र का इज़हार करना मुस्तहब है। फिर फरमाते हैं।

तरजमा : इब्ने हजर हैतमी ने फरमाया कि बिदअते हसना के मुस्तहब होने पर सबका इत्तिफ़ाक़ है और मीलाद शरीफ करना और उसमें लोगों का जमा होना भी इसी तरह बिदअते हसना है। इमाम सख़ावी ने फरमाया कि मीलाद शरीफ़ तीनों ज़मानों में किसी ने न किया, बाद में ईजाद हुआ। फिर हर तरफ के और हर शहर के मुसलमान हमेशा मौलूद शरीफ़ करते रहे और करते हैं और तरह-तरह के सदक़ा व ख़ैरात करते हैं और हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के मीलाद पढ़ने का बड़ा एहतमाम करते हैं और इस मज्लिस पाक की बर्कतों से उन पर अल्लाह का बड़ा ही फ़ज़्ल होता है। इमाम इब्ने जौज़ी फरमाते हैं कि मीलाद शरीफ़ की तासीर यह है कि साल भर इसकी बरकत से अमन रहती है और इसमें मुरादें पूरी होने की खुशख़बरी है जिस बादशाह ने पहले इसको ईजाद किया वह शाह अरबल है और इब्ने दहीह ने इसके लिए मीलाद शरीफ़ की एक किताब लिखी जिस पर बादशाह ने उसको हज़ार अशर्फ़ियाँ नज़र कीं और हाफ़िज़ इब्ने हजर और हाफ़िज सुयूती ने उसकी असल सुन्नत से साबित की है और उनका रद किया है जो कि उसको बिदअते सैयआ कह कर मना करते हैं।

मुल्ला अली क़ारी मूरिदुर्रवा में दीबाचा के मुत्तसिल फरमाते हैं।

ला ज़ाला अह्लुल-इस्लामे यहतफ़ेलूना फ़ी कुल्ले सनतिन जदीदतिन व यतनूना बेकराअते मौलेदेहिल करीम व यज्हरू अलैहिम मिन बरकातेहि कुल्ला फसालिन अज़ीम।

और उसी किताब के दीबाचा में यह अश्आर फरमाते हैं।

लेहाजश्शहरे फ़ील इस्लामे फज़्लुब व मनकबुतुन तफ़ूकुन अलश्शहूरे रबिउन फी रबीईन फी रबीईन व नुरुन फ़ौकुन नूरिन फ़ौकुने नूरिन

इस इबारत से तीन बातें मालूम हुईं एक यह कि मश्रिक़ व मग्रिब के

(2) शामी ने **बाबुल-अज़ान** में जहाँ के मौक़ा शुमार किए हैं वहाँ अज़ान क़ब्र का भी ज़िक्र फरमाया मगर साथ ही फरमाया **लाकिन्ना रद्दहू इब्नु हजरिन फ़ी शरहिल-उबाबे।** इस अज़ान की इब्ने हजर ने शरह उबाब में तरदीद कर दी है मालूम हुआ कि अज़ाने क़ब्र मरदूद है।

जवाब : अव्वलन तो इब्ने हजर शाफ़ई मज़्हब हैं बहुत से उलमा जिनमें कुछ अहनाफ़ भी शामिल हैं फरमाते हैं कि अज़ाने क़ब्र सुन्नत है और इमाम इब्ने हजर शाफ़ई इसकी तरदीद करते हैं तो बताओ कि हन्फ़ीयों को मसअला जम्हूर पर अमल करना होगा कि क़ौले शाफ़ई पर? दोम इमाम इब्ने हजर ने भी अज़ाने क़ब्र को मना न किया बल्कि इसके सुन्नत होने का इंकार किया यानी यह सुन्नत नहीं। अगर मैं कहूँ कि बुख़ारी छापना सुन्नत नहीं बिल्कुल दुरुस्त है। क्योंकि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के ज़माना में न बुख़ारी थी न प्रेस। लेकिन इसका मतलब यह नहीं कि जाइज़ भी नहीं। शामी ने इस मौक़ा पर फरमाया **वक़द यसुन्नुल-आज़ानु** इन मौक़ों पर अज़ान सुन्नत है। आगे फरमाया **रद्दहू** इसकी इब्ने हजर ने तरदीद की तो किस चीज़ की तरदीद हुई? सुन्नियत कीं। शामी समझने के लिए अक़्ल व ईमान की ज़रूरत है। तीसरे यह अगर मान भी लो कि अल्लामा इब्ने हजर अलैहिर्रहमा ने ख़ुद अज़ान की तरदीद की। तो क्या किसी आलिम के तरदीद करने से कराहत या हुरमत साबित हो सकती है हरगिज़ नहीं। बल्कि इसके लिए दलीले शरई की ज़रूरत है। बिला दलीले शरई कराहते तंज़ीही भी साबित नहीं होती। शामी **बहस मुस्तहब्बातिल-वुज़ू** में है। **वला यल्ज़मु मिन तरकिल-मुस्तहब्बे सुबूतुल-कराहते इज़ ला बुद्दा लहू मिन दलीलिन ख़ासिन।** तर्क मुस्तहब से कराहत साबित नहीं होती क्योंकि कराहत के लिए दलीले ख़ास की ज़रूरत है। शामी जिल्द अव्वल बहस **मकरूहातिस्सलाते ब्यानुल-मुस्तहब्बे वस्सुन्नते वल-मन्दूबे।** (सफ़: 302) में है।

मुस्तहब के तर्क से यह लाज़िम नहीं आता कि वह मकरूह हो जाए बग़ैर ख़ास मुमानेअत के क्योंकि कराहत हुक्मे शरई है इसके लिए ख़ास दलील की ज़रूरत है। आप तो अज़ाने क़ब्र को हराम फरमाते हैं। फ़ुक़हा बेग़ैर ख़ास मुमानेअत के किसी चीज़ को मकरूहे तंज़ीही भी नहीं मानते।

अगर कहा जाए कि शामी ने अज़ाने क़ब्र को **क़ीला** से बयान किया और **क़ीला** ज़ुअफ़ की अलामत है तो जवाब यह है कि फ़िक़ह में **क़ीला** ज़ुअफ़ के लिए लाज़िम नहीं। शामी **किताबुस्सौम फ़स्ले कफ़्फ़ारा** में है। **फ़ताबीरुल-मुसन्निफ़े बेक़ीला लैसा यल्ज़मुज़्ज़ुअफ़ा।** इसी तरह शामी बहस दफ़ने मैयत में **ज़िक्र मअल-जनाज़ा** के लिए फ़रमाया **क़ीला तहरीमन व क़ीला तंज़ीहन** देखो यहाँ दो क़ौल थे और दोनों **क़ीला** से नक़्ल किए। आलमगीरी **किताबुल-वक़्फ़े बहसु मस्जिद** में है **व क़ीला हुवा मस्जिदन**

अबदन वहुवल-असह्हु यहाँ सही क़ौल **क़ीला** से बयान किया। मालूम हुआ कि **क़ीला** दलीले ज़ुअफ़ नहीं। और अगर मान भी लिया जाए तो भी इस अज़ान को सुन्नत कहना ज़ुअफ़ होगा न कि ना जाइज़ कहना क्योंकि यह सुन्नत ही का क़ौल है। हम भी अज़ाने क़ब्र सुन्नत नहीं कहते सिर्फ़ जाइज़ व मुस्तहब कहते हैं।

(3) फुक़हा फरमाते हैं कि क़ब्र पर जा कर सिवाए फ़ातिहा के कुछ न करे और अज़ाने क़ब्र फ़ातिहा के अलावा है लिहाज़ा हराम है। चुनांचे **बहरुर्राइक़** में है।

यानी मैयत को क़ब्र में उतारते वक़्त अज़ान देना सुन्नत नहीं है जैसा कि आजकल मुरव्वज है और इब्ने हजर ने तसरीह फरमा दी कि यह बिदअत है और जो कोई इसको सुन्नत जाने वह दुरुस्त नहीं कहता।

दुर्रुल-बह्हार में है –

जो बिदअतें कि हिन्दुस्तान में शाए हो गईं उनमें से दफन के बाद क़ब्र पर अज़ान देना है। तौशीह शरह तंक़ीह में महमूद बल्ख़ी अलैहिर्रहमा फरमाते हैं **अल-आज़ानु अलल-क़बरे लैसा बेशैइन।** क़ब्र पर अज़ान देना कुछ नहीं। मौलवी इस्हाक़ साहब मेअते मसाइल में फरमाते हैं कि क़ब्र पर अज़ान देना मक्रूह है क्योंकि यह साबित नहीं और जो सुन्नत से साबित न हो वह मक्रूह होता है।

जवाब : बहरुर्राइक़ का यह फरमाना कि क़ब्र पर जा कर सिवाए ज़ियारत व दुआ और कुछ करना मक्रूह है बिल्कुल दुरुस्त है वह ज़्यारते कुबूर के वक़्त फरमाते हैं यानी जब वहाँ ज़्यारत की नीयत से जाए तो क़ब्र को चूमना या सज्दा करना वग़ैरह नाजाइज़ काम न करे और यहाँ गुफ़्तगू है दफन के वक़्त यह ज़्यारत का वक़्त नहीं है। अगर वक़्ते दफन भी उसमें शामिल है। तो लाज़िम होगा कि मैयत को क़ब्र में उतारना, तख़्ता देना, मिट्टी डालना और बाद दफन तल्क़ीन करना, जिसको फ़तावा रशीदिया में भी जाइज़ कहा है सब मना हो। पस मुर्दे को जंगल में रख कर फ़ातिहा पढ़ कर भाग आना चाहिए। और ज़्यारते क़ब्र के वक़्त भी मना काम करना मना है। वही इबारत **बहरुर्राइक़** का मक़्सूद है। वरना मुर्दों को सलाम करना या उनके कुबूर पर सब्ज़ा या फूल डालना बिल-इत्तिफ़ाक़ जाइज़ है। हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम से साबित है। और **बहरुर्राइक़** में फरमा रहे हैं कि वहाँ बजुज़ ज़्यारत और खड़े हो कर दुआ करने के कुछ भी न करे। मौलवी अशरफ़ साहब की **हिफ़्ज़ुल-ईमान** में एक सवाल है कि शाह वलीयुल्लाह साहब कश्फ़े कुबूर का तरीक़ा बयान फरमाते हैं "यानी इसके बाद सात चक्कर तवाफ़ करे और उसमें तक्बीर कहे और दाहिनी तरफ़ से शुरू करे और क़ब्र के पाँव की तरफ अपना रुख़्सार रखे तो क्या क़ब्र का तवाफ़ और सज्दा जाइज़ है? इसका जवाब **हिफ़्ज़ुल-ईमान** सफ़: 6 पर देते हैं। यह

सब ख़ामोश हो जाओ। ख़्याल रहे कि मसाजिद में ज़्यादा एहतमाम जमाअते अव्वल का होता है जिस पर बहुत से शरई मसले मुतफ़र्रे हैं। मक्का मुअज़्ज़मा में सिर्फ़ जमाअत ऊला के लिए तवाफ़ बन्द होता है जहाँ यह जमाअत ख़त्म हुई तवाफ़ शुरू हुआ। और तवाफ़ में दुआओं का इस क़द्र शोर होता है कि कान पड़ी आवाज़ सुनाई नहीं देती कहिए वहाँ इस ज़िक्र **बिल-जेहर** का क्या हुक्म है? क्या नमाज़ियों के ख़लल की वजह से तवाफ़ बन्द कराओगे?

बहस औलिया अल्लाह के नाम पर जानवर पालना

कुछ लोग जो कि फ़ातिहा ग्यारहवीं या कि मीलाद शरीफ़ के पाबन्द हैं वह इसके लिए कुछ अरसा पहले बकरे और मुर्ग़े वग़ैरह पालते हैं और उनको फरबा करते हैं। तारीख़े फ़ातिहा पर उनको बिस्मिल्लाह पर ज़िब्ह करके खाना पका कर फ़ातिहा करते हैं और फ़ुक़रा और सुलहा को खिलाते हैं। चूंकि वह जानवर उसकी नीयत से पाला गया है इसलिए कह देते हैं ग्यारहवीं का बक़रा या ग़ौस पाक की गाय वग़ैरह यह शरअन हलाल है जैसे वलीमा का जानवर मगर मुख़ालेफ़ीन इस काम को हराम इस गोश्त को मुरदार और करने वाले को मुरतद व मुश्रिक कहते हैं। इसलिए इस बहस के भी दो बाब किए जाते हैं। पहले बाब में इसके जवाज़ का सुबूत। और दूसरे बाब में इस पर ऐतराज़ात व जवाबात।

पहला बाब

इस जवाज़ के सुबूत में

जिस हलाल जानवर को मुसलमान या अह्ले किताबुल्लाह का नाम लेकर ज़िबह करे वह हलाल है और जिस हलाल जानवर को मुश्रिक या मुरतद ज़िबह करे वह मुरदार है। इसी तरह अगर मुसलमान दीदा व दानिस्ता बवक़्त ज़िबह बिस्मिल्लाह पढ़ना छोड़ दे या ख़ुदा के सिवा किसी और का नाम लेकर ज़िबह करे (मसलन बजाए बिस्मिल्लाह अल्लाहु अक्बर के कह दे यां ग़ौस और ज़िबह कर दे तो हराम है) ख़्याल रहे कि इस हिल्लत व हुर्मत में ज़िबह करने वाले का ऐतबार है न कि मालिक का। अगर मुसलमान का जानवर मुश्रिक ने ज़िबह कर दिया मुरदार हो गया। अगर मुश्रिक ने बुत के नाम पर जानवर पाला मगर उसको मुसलमान ने बिस्मिल्लाह से ज़िबह कर दिया हलाल है इसी तरह ज़िबह के वक़्त नाम लेने का ऐतबार है न कि आगे पीछे ज़िन्दगी में जानवर बुत के नाम का था मगर ज़िबह ख़ुदा के नाम पर हुआ हलाल है। और ज़िन्दगी में जानवर क़ुरबानी

हैं और तमाम देवबन्दी भी उनको मानते हैं। शामी **बाबुज़्ज़ब्ह** में है।

ऐलम अन्नल-मदारा अलल-कस्दे इन्दा इब्तिदाइज़्ज़ब्ह जानना चाहिए कि हिल्लत व हुर्मत का दार व मदार ज़िब्ह के वक़्त नीयत का है। साफ़ मालूम हुआ कि ज़िब्ह से पहले की नीयत या नाम बिल्कुल मोतबर नहीं। आलमगीरी **बाबुज़्ज़ब्ह** में है।

मुसलमानों ने मजूसी की वह बकरी जो उनके आतिश कदा के लिए या काफिर की उन बुतों के लिए थी ज़िब्ह की वह हलाल है क्योंकि उस मुसलमान ने अल्लाह का नाम लिया है मगर यह काम मुसलमान के लिए मक्रूह है इसी तरह ततार खानिया में जामेउल-फ़तावा से नक़्ल किया। देखिए जानवर पालने वाला काफिर है और ज़िबह भी कराता है बुत या आग की इबादत की नीयत से। गोया मालिक का पालना और ज़िबह करना दोनों फासिद मगर चूंकि बवक़्त ज़िबह मुसलमान ने ज़ुबान से बिस्मिल्लाह कह के ज़िबह किया है लिहाज़ा जानवर हलाल है। कहिए ग्यारहवीं या मीलाद का बकरा उस बुत परस्त के बकरे से भी गया गुज़रा है? कि वह तो हलाल मगर यह हराम। अल्हम्दुलिल्लाह बख़ूबी साबित हुआ कि ग्यारहवीं वग़ैरह का जानवर हलाल है और यह फ़ेअल बाइसे सवाब।

दूसरा बाब

औलिया के जानवर के मुतअल्लिक़ ऐतराज़ात व जवाबात

(1) इस आयत **मा उहिल्ला बेही लेग़ैरिल्लाह** में कलिमा **उहिल्ला** एहलाल से मुश्तक़ है और एहलाल के मानी लुग़त में ज़िबह के नहीं बल्कि मुतलक़न पुकारने के हैं लिहाज़ा जिस जानवर पर ग़ैरे ख़ुदा का नाम पुकारा ख़्वाह तो उसकी ज़िन्दगी में या बवक़्ते ज़िबह वह मुरदार है तो ग़ौस पाक का बकरा अगरचे ख़ुदा के नाम पर ज़िबह हो हराम है।

नोट : यह ऐतराज़ शाह अब्दुल-अज़ीज़ साहब क़ुद्देस सिर्रहू का है वह इस मसला में सख़्त ग़लती फरमा गए। और यह भी मुम्किन है कि इन किताब में इल्हाक़ किया गया हो।

जवाब : एहलाल के लुग्वी माने तो हैं मुतलक़न पुकारना। मगर उर्फ़ी मानी हैं बवक़्त ज़िबह पुकारना। और यह उर्फ़ी माना ही इस जगह मुराद हैं। सलात के लुग्वी मानी तो हैं मुतलक़न दुआ। मगर उर्फ़ी माना हैं नमाज़। तो **अक़ीमुस्सलाता** से नमाज़ फ़र्ज़ होगी न कि आम दुआ। तफ़्सीरे कबीर में इसी आयत **मा उहिल्ला** के मातेहत है **अल-एहलालु रफ़उस्सौते हाज़ा मानल-एहलाल फ़िल्लुग़ते सुम्मा क़ीला लिल-मुहरिम अलख़।** एहलाल के मानी हैं आवाज़ बुलन्द करना (पुकारना) यह माना लुग्वी हैं फिर मुहरिम को

कहा गया। इसी तरह हाशिया बैजावी **लिश्शेहाब** में इसी आयत **मा उहिल्ला** के मातहत है। **ऐ रुफ़ेआ बेहिस्सौतु हाज़ा अस्लुहू सुम्मा जुएला इबारतन अम्मा ज़ुबेहा लेग़ैरिल्लाहे।** यानी उसको पुकारा गया हो यह एहलाल के लुग्वी माना हैं फिर इस **उहिल्ला** से मुराद ली गई है कि वह जानवर जो ग़ैरे ख़ुदा के नाम पर ज़िबह किया जाए। अगर यहाँ एहलाल के लुग्वी माना मुराद हों तो चन्द ख़राबियां लाज़िम होंगी। अव्वलन यह कि यह तफ़्सीर इज्माए मुफ़स्सेरीन और अक्वाले सहाबा किराम के ख़िलाफ़ होगी। मुफ़स्सेरीन के अक्वाल तो हम पहले बाब में अर्ज़ कर चुके। अब सहाबा किराम वग़ैरेहुम के अक्वाल मुलाहिज़ा हों। तफ़्सीरे दुर्रे मंसूर में इसी आयत के मातहत है।

मालूम हुआ कि इस क़दर सहाबा किराम व ताबईन का यही फ़ैसला है कि इस आयत से मुराद है ग़ैरुल्लाह के नाम पर ज़िबह करना। जवाब दोम यह है कि तुम्हारे बताए हुए यह मानी खुद कुरआने करीम के भी ख़िलाफ़ हैं। कुरआन फरमाता है।

अल्लाह ने बहीरा और साइबा और वसीला और हाम नहीं मुक़र्रर किए। लेकिन कुफ़्फ़ार अल्लाह पर झूठ बांधते हैं। यह चार जानवर बुहैरा वग़ैरह वह थे। जिनको कुफ़्फ़ारे अरब बुतों के नाम पर छोड़ देते थे और उनको हराम समझते थे। कुरआन ने इस हराम समझने की तरदीद फरमा दी। हालांकि उन पर ज़िन्दगी में बुतों का नाम पुकारा गया था। और उनके खाने का हुक्म दिया कि फरमाया **कुलू मिम्मा रज़क़कुमुल्लाहु** अलख़ **वला तत्तबेऊ ख़ुतुवातिश्शैतान** अलख़ खाओ उसको ज़ो तुम्हें अल्लाह ने दिया और शैतान के क़दमों की पैरवी न करो। तफ़्सीर **फ़त्हुल-बयान** ज़ेरे आयत **मा जअलल्लाहु निम बहीरतिन अलख़** और नुववी शरह मुस्लिम **किताबुल-जन्नह व तालीमेहा बाबुस्सिफ़ते अल्लती युअरफ़ु बेहा फ़िद्दुनिया अहलिल-जन्नह।** सफ़ह 385 में है।

यानी इस आयत से इन जानवरों की हुर्मत का इंकार करना मक़सूद है जिनको कुफ़्फ़ार हराम समझते थे बुहैरह वग़ैरह कि यह जानवर इनके हराम कर लेने से हराम नहीं हो गए। इससे मालूम हुआ कि जो सांड हिन्दू लोग बुतों के नाम पर छोड़ते हैं वह हराम नहीं हो जाता। अगर मुसलमान बिस्मिल्लाह कह कर ज़िबह कर ले तो हलाल है। हाँ ग़ैर की मिल्कियत की वजह से ऐसा करना मना है। और रब तआला फ़रमाता है। **व क़ालू हाज़ेही अंआमुन व हरसुन हिज्रुन ला यत्अमुहा इल्ला मन नशाओ बेज़अमेहिम** और कुफ़्फ़ार बोले कि यह जानवर और खेती रोकी हुई है इसको वही खाए जिसको हम चाहें अपने झूठे ख़्याल में नीज़ फरमाता है।

व क़ालू मा फ़ी बुतूने हाज़ेहिल-अंआमे ख़ालिसतुन लेज़ुकेरेना व मुहर्रमुन अला अज्वाजेना। कुफ़्फ़ार बोले कि जो उन जानवरों के शिकम

न जुर्म जैसे कि रोज़ा में ठंडा पानी देख कर उस तरफ़ दिल राग़िब तो होता है मगर इसके पी लेने का इरादा तो क्या ख़्याल तक नहीं होता। सिर्फ़ ठंडा-ठंडा पानी अच्छा मालूम होता है अगर दोनों **हम्मों** के एक ही मानी होते तो दो जगह यह लफ़्ज़ न बोला जाता बल्कि **वलक़द हम्मा** तस्निया से कह देना काफी थी। यानी इन दोनों ने इरादा कर लिया। देखो **मकरू व मकरल्लाहु** कि यहाँ मक्र के मानी ही और हैं और दूसरे मक्र का मक़्सद ही कुछ और। तफ़्सीर ख़ाज़िन में है।

क़ालल-इमामु फ़ख़्रुद्दीन अन्ना यूसुफ़ा अलैहिस्सलामु काना बरीअन मिनल-अमलिल-बातिले वल-हम्मिल-मुहर्रमे। ख़्याल रहे कि ज़ुलेखा ने दरवाज़ा पर अज़ीज़े मिस्र को देख कर यूसुफ़ अलैहिस्सलाम को ज़िना की तोहमत न लगाई बल्कि इराद-ए-ज़िना की। कि कहा **क़ालत मा जज़ाओ काना बरीअन मन अरादा बेअहलिका सूअन इल्ला अन युस्जना।** जो तेरी बीवी के साथ बुराई का इरादा करे उसकी सज़ा जेल के सिवा और क्या है इसी की तरदीद यूसुफ़ अलैहिस्सलाम ने फरमाई कि **हिया रवत्तनी अन नफ़्सी** बदकारी का इरादा उसी ने किया था। इसकी तर्दीद शीर ख़्वार बच्चा ने भी की। और उसकी तर्दीद ख़ुद अज़ीज़े मिस्र ने क़मीस मुबारक फटी हुई देख कर की। कि कहा **इन्नहू मिन कैदेकुन्ना** और इसकी तर्दीद मिसरी औरतों ने भी की। और इसकी तर्दीद आख़िर कार ख़ुद ज़ुलेखा ने भी करके अपना जुर्म कबूल कर लिया अब अगर **हम्मा बेहा** के मानी हों कि यूसुफ़ अलैहिस्सलाम ने इराद-ए-ज़िना कर लिया था तो लाज़िम आता है कि रब तआला ने ज़ुलेखा की ताईद की। और उन सब हज़रात की तर्दीद। और यह कलाम के मक़्सद के ख़िलाफ़ है। यह तक़रीर बहुत ख़्याल में रहे इंशाअल्लाह काम आएगी।

(8) मूसा अलैहिस्सलाम ने एक क़िब्ती को जान से मार दिया। और फरमाया **हाज़ा मिन अमलिश्शैताने** कि यह शैतानी काम है। मालूम हुआ कि आपने ज़ुल्मन क़त्ल किया जो कि बड़ा जुर्म है।

जवाब : आपका इरादा क़त्ल का न था बल्कि क़िब्ती ज़ालिम से मज़्लूम इसराईली को छुड़ाना था। जब क़िब्ती ने न छोड़ा। आपने हटाने के लिए चपत लगा दी। वह ताक़त नबी की न बर्दाश्त कर सका मर गया। तो यह क़त्ले ख़ता हुआ और अंबिया से खता हो सकती है। और यह वाक़िया अताए नुबुव्वत से पहले का है। रूहुल-ब्यान में है। **काना हाज़ा क़ब्लन्नबुव्वते** और वह क़िब्ती काफिर हरबी था जिसका क़त्ल जुर्म नहीं। आपने तो एक ही क़िब्ती को मारा कुछ दिनों बाद तो सारे ही क़िब्ती ग़र्क़ कर दिए गए रहा इस फ़ेअल को अमले शैतान फरमाना। यह आपकी इंतिहाई कसर नफ़्सी और आजिज़ी का इज़्हार है। कि ख़िलाफ़े औला काम को भी अपनी खता समझा

(8) **उम्दतुल-क़ारी** शरह बुख़ारी जिल्द पंजुम सफ़: 257 में है।

इन इबारत से मालूम हुआ कि सहाबा किराम ताबईन व तबा ताबईन व फ़ुक़्हा मुहद्देसीन का बीस रकअत तरावीह पर इत्तिफ़ाक़ है। इन में से न किसी ने आठ तरावीह पढ़ीं न इसका हुक्म दिया।

लतीफा : ग़ैर मुक़ल्लिद दरअसल अपनी ख़्वाहिशे नफ़्स के मुक़ल्लिद हैं इस लिए उन्हें अह्ले हवा यानी हवा परस्त कहा जाता है। जिसमें नफ़्स को आराम मिले वही उनका मज़्हब है। हम उनके आराम देह मसाइल दिखाते हैं। मुसलमान देखें और इबरत पकड़ें।

(1) दो मटके पानी कभी गन्दा नहीं होता लिहाज़ा कुंआं कितना ही पलीद हो जाए उसका पानी पिए जाओ।

(2) सफर में चन्द नमाज़ें एक वक़्त में पढ़ लो। रवाफ़िज़ की तरह कौन बार-बार उतरे और पढ़े। रेल में बहुत भीड़ होती है।

(3) औरतों के ज़ेवर पर ज़कात नहीं। हाँ जनाब क्यों हो इसमें ख़र्च जो होता है।

(4) तरावीह आठ रकाअत पढ़ कर आराम करो। हाँ साहिब नमाज़ नफ़्स पर भारी है।

(5) वित्र सिर्फ़ एक रकाअत पढ़ कर सो रहो। क्यों न हो जल्द नमाज़ से छुटकारा अच्छा है।

(6) एक बारगी तीन तलाक़ दे दो। सिर्फ़ एक ही वाक़े होगी। दोबारा रुजूअ हो सकता है। क्यों न हो इसमें आसानी है। ग़र्ज़ेकि जिसमें आराम वह यारों का दीन ईमान।

लतीफा : मुस्लिम शरीफ़ किताबुत्तलाक़ में है कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम और अबू बकर सिद्दीक़ रज़ि अल्लाहु अन्हु के ज़माना में तीन तलाक़ एक ही होती थी। हज़रत उमर ने फरमाया कि लोगों ने इसमें जल्दी पैदा कर दी लिहाज़ा अब इससे तीन तलाक़ ही वाक़े होनी चाहिएं। आराम तलब ग़ैर मुक़ल्लिदीन ले उड़े कि एक दम तीन तलाक़ें एक ही होती हैं। इन अल्लाह के बन्दों ने यह न सोचा कि क्या उमर रज़ि अल्लाहु अन्हु ख़िलाफ़े सुन्नत हुक्म कर सकते हैं। और फिर लुत्फ़ यह है कि आपने यह क़ानून बना दिया और किसी सहाबी ने मुख़ालफ़त न की। बात सिर्फ़ यह थी कि ज़मानाए नब्वी में बाज़ लोग यूं कह देते थे तुझे तलाक़ है तलाक़ तलाक़ और आख़िर में दो तलाक़ों से पहली तलाक़ की ताकीद करते थे। जैसे कोई कहे में कल जाऊंगा। कल कल मैं रोटी खाऊंगा। रोटी-रोटी अब भी अगर कोई इस नीयत से यह अल्फ़ाज़ बोले तो इन्दल्लाह एक ही तलाक़ वाक़े होगी। ज़मानाए फ़ारूक़ी में लोग तीन तलाक़ें ही देने लगे चूंकि अमल बदल गया हुक्म भी बदल गया। तब आपने यह हुक्म नाफ़िज़ फरमाया। इस मस्आला

जमाते तरावीह पढ़ते हैं। बताओ इनकी यह हमेशगी बिदअते सैय्यआ है या नहीं? अगर हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने आठ तरावीह पढ़ी तो सिर्फ़ दो तीन रोज़ ही पढ़ीं। तुम इसकी हमेशगी करके कौन हुए? नीज़ तिर्मिज़ी शरीफ़ की रिवायत से साबित हुआ कि मक्का वालों का बीस तरावीह पर इत्तिफ़ाक़ है और मदीना वालों का इक्तालीस पर इनमें से कोई भी आठ रकाअत का आमिल नहीं। बताओ यह सारे लोग बिदअती और फ़ासिक़ हुए या नहीं? अगर हुए तो इन से हदीस लेना कैसा? फ़ासिक़ की रिवायत मोतबर नहीं। नीज़ बताओ क्या किसी मुल्क में मुसलमानों में आठ रकआत तरावीह पढ़ीं। तीसरे यह कि इसी हदीस से आठ रकाअत तरावीह साबित हुई। तो तीन रकाअत वित्र भी साबित हुए तब ही तो ग्यारह रकाअत साबित होंगी। फिर आप वित्र एक रकाअत क्यों पढ़ते हो? आराम के लिए हक़ यह है कि आठ रकाअते तरावीह की तस्रीह कहीं नहीं मिलती। क्योंकि जहाँ क़्यामे रमज़ान का ज़िक्र है वहाँ तादादे रकाअत से ख़ामोशी है। और जिन अहादीस में ग्यारह का ज़िक्र है वहाँ तरावीह की तस्रीह नहीं बल्कि इससे तहज्जुद मुराद है। ऐसी रिवायत पेश करो जिसमें आठ तरावीह की तस्रीह हो। ऐसी इंशाअल्लाह न मिलेगी।

चूंकि सलतनते मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का हमने मुस्तक़िल रिसाला लिख दिया। इसलिए ज़मीमा में यह मज़मून शामिल न किया गया।

बिस्मिल्लाहहिर्रहमानिर्रहीम

व सल्लल्लाहु तआला अला खैरे खल्केही व नूरे अरशेही सैय्यिदन मुहम्मदिन व आला आलेहि व अस्हाबिहि अजमईन बेरहमतेहि व हुवा अरहमर्राहिमीन।

तीन तलाक़ के हुक्म के बारे में मक़बूल दलील

अगर कोई शख़्स अपनी बीवी को एक दम तीन तलाक़ें दे दे तो अगरचे उसने बुरा किया। मगर इस सूरत में तलाक़ें तीन ही वाक़े होंगी न कि एक। और यह औरत बग़ैर हलाला उस मर्द को हलाल न होगी। चूंकि ज़माना मौजूदा के ग़ैर मुक़ल्लिद वहाबी इसके मुंकिर हैं और ख़्वाहिशे नफ़्सानी के मातहत कहते हैं इस सूरत में तलाक़ एक ही वाक़े होगी। और औरत से रुजूअ करना सही होगा। इसलिए इस बहस में एक मुक़द्दमा और दो बाब लिखे जाते हैं पहले बाब में मसअला के दलाइल और दूसरे बाब में इस पर ऐतराज़ात व जवाबात।

मुक़द्दमा

बेहतर यह है कि अगर औरत को तलाक़ देना हो तो सिर्फ़ एक ही तलाक़ पाकी में दे। और अगर तीन तलाक़ें ही देना हों तो हर पाकी में एक

तलाक़ दे। लेकिन अगर कोई बहालते हैज़ तलाक़ दे दे या तीनों तलाक़ें एक दम दे दे तो अगर चे उसने बुरा किया मगर जो तलाक़ देगा वही वाक़े होगी।

एक साथ तीन तलाक़ें देने की तीन सूरतें हैं।

नम्बर (1) अगर शौहर ने अपनी इस बीवी को जिससे सिर्फ़ निकाह हुआ हो और ख़ल्वत न हुई हो एक दम तीन तलाक़ें इस तरह दे कि तुझे तलाक़ है, तलाक़ है, तलाक़ है। इस सूरत में सिर्फ़ पहली एक तलाक़ वाक़े होगी। और अख़ीरी दो वाक़े न होंगी। क्योंकि पहली तलाक़ बोलते ही वह औरत निकाह से खारिज हो गई और उस पर इद्दत भी वाजिब न हुई। और तलाक़ के लिए निकाह या इद्दत चाहिए। हाँ अगर उस औरत से यूं कहे कि तुझे तीन तलाक़ें हैं तो तीनों पड़ जाएंगी। क्योंकि इस औरत में तीनों तलाक़ें निकाह की मौजूदगी में पड़ीं। (आम्मा कुतुब)

नम्बर (2) अगर शौहर अपनी इस बीवी को जिससे ख़ल्वत हो चुकी है इस तरह तलाक़ें दे कि तुझे तलाक़ है तलाक़ तलाक़। और अख़ीर दो तलाक़ों से पहली तलाक़ की ताकीद की नीयत करे न अलाहिदा तलाक़ों की तब भी दयानतन तलाक़ एक ही होगी (क़ाज़ी इसकी यह बात न मानेगा) क्योंकि उस शख़्स ने एक तलाक़ की दो दो ताकीदें की हैं जैसे कोई कहे कि पानी पी लो। पानी पानी। खाना खा लो। खाना खाना। मैं कल गया था कल कल इन सब सूरतों में पिछले दो लफ़्ज़ों से पहले लफ़्ज़ की ताकीद है।

नम्बर (3) अगर कोई शख़्स अपनी बीवी को जिस से ख़ल्वत हो चुकी है बयक वक़्त तीन तलाक़ें दे ख़्वाह यूं कहे कि तुझे तीन तलाक़ें हैं। या यह कहे कि तुझे तलाक़ है तलाक़ है। बहरहाल तलाक़ें, तीन ही वाक़ें होंगी और यह औरत अब बग़ैर हलाला इस मर्द को हलाल न होगी। इस पर इमाम अबू हनीफ़ा व शाफ़ई व मालिक व अहमद और सल्फ़न ख़ल्फ़न जम्हूर उलमा का इत्तिफ़ाक़ है। हाँ बाज़ ज़ाहिरबीं मौलवी इस आख़िरी सूरत में इख़्तिलाफ़ करते हैं। चुनांचे तफ़्सीरे सावी में पारा दोम ज़ेरे आयत–

फ़इन तल्लक़हा फला तहिल्लु लहू है।

यानी उलमा-ए-उम्मत का इस पर इत्तिफ़ाक़ है कि जो तीन तलाक़ें अलग अलग दे या एक दम। औरत बहर हाल हराम हो जाएगी। और नुववी शरह मुस्लिम जिल्द अव्वल **बाबुत्तलाक़ अस्सुलुस** में है।

तरजमा : यानी जो कोई अपनी बीवी से कहे कि तुझे तीन तलाक़ें हैं तो चारों इमाम और सल्फ़ व ख़ल्फ़ के आम उलमा फरमाते हैं कि तीन ही वाक़े होंगी। हाँ कुछ अह्ले ज़ाहिर ने कहा है कि एक ही वाक़े होगी। बल्कि हुज्जाज इब्ने अरतात और इब्ने मक़ातिल और मुहम्मद बिन इसहाक़ कहते हैं। कि इससे एक तलाक़ भी न पड़ेगी।

देखो नुववी यही मक़ाम चूंकि मौजूदा ज़माना के ग़ैर मुक़ल्लिद हर जगह आराम नफ़्स ढूँढते हैं जिस चीज़ में नफ़्से अम्मारह को राहत मिले ख़्वाह वह बातिल से बातिल और ज़ईफ़ से ज़ईफ़ कौल हो वही उनका दीने ईमान है। इसलिए उन्होंने इब्ने तैमिया की इत्तिबा करते हुए यह अक़ीदा रखा है। कि एक दम तीन तलाक़ों से एक ही वाक़े होगी। तफ़सीरे सावी पारा दोम ज़ेरे आयत **फ़इन तल्लक़हा फ़ला तहिल्लु** है।

तरजमा : यानी यह कहना कि एक दम दी हुई तीन तलाक़ों से एक ही वाक़े होती है। यह सिवा इब्ने तैमिया हंबली के और किसी ने भी नहीं कहा है और इब्ने तैमिया की ख़ुद उसके मज़्हब के इमामों ने तरदीद कर दी। उलमा-ए-किराम तो फरमाते हैं कि इब्ने तैमिया ख़ुद भी गुम्राह है और दूसरों को गुम्राह करने वाला है और इस मसला की नफीस निस्बत इमाम अशहब मालिकी की तरफ ग़लत है।

बहरहाल पता यह लगा कि मौजूदा ग़ैर मुक़ल्लिद महज़ नफ़्सानी आसानी के लिए यह बातिल अक़ीदा लिए बैठे हैं। हमने इस मसला नफ़ीस की तहक़ीक़ अपनी तफ़्सीरे नईमी जिल्द दोम ज़ेरे आयत **फ़इन तल्लक़हा फला तहिल्लु लहू** में कर दी है मगर चूंकि आजकल इस मसला के मुतअल्लिक़ बहुत शोर मचा हुआ है और हमारे पास इस क़िस्म के सवालात बहुत कसरत से आ रहे हैं।

इसलिए हम रब के भरोसे पर इस मसला का फ़ैसला किए देते हैं अल्लाह तआला और उसके रसूल मक़बूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से उम्मीदे क़बूल है और नाज़िरीन से उम्मीदे इंसाफ़। बयान का यही तरीक़ा होगा कि मसला दो बातों में बयान किया जाएगा। पहले बाब में अपने दलाइल और दूसरे बाब में मुख़ालेफ़ीन के ऐतराज़ात और उनके जवाबात।

पहला बाब

उसके सुबूत में

बेहतर तो यह है कि तलाक़ एक ही दे ज़्यादा दे ही नहीं और अगर तीन तलाक़ें ही देना है तो हर पाकी में एक तलाक़ दे तीन पाकी में तीन। एक दम चन्द तलाक़ें देना सख़्त बुरा है। लेकिन अगर किसी ने एक दम चन्द तलाक़ें दे दीं तो अगरचे बुरा किया मगर तीनों वाक़े हो जाएंगी। जैसे तलाक़ बहालते हैज़ कि अगरचे बुरा है मगर तलाक़ वाक़े हो जाती है उसके दलाइल हस्बे ज़ेल हैं।

नम्बर (1) रब तआला फरमाता है **अत्तलाकु मर्रताने फ़इम्साकुन बेमारूफ़िन और तस्रीहिन बेएहसानिन।** फिर फरमाता है **फ़इन तल्लक़हा फला तहिल्लु लहू** इस आयत से मालूम हुआ कि दो तलाक़ों तक रुजूअ़ का

हक़ है तीन में नहीं और मरतान के इतलाक़ से मालूम हुआ कि अलग अलग तलाकें देना शर्त नहीं जिसके बग़ैर तलाकें वाक़े ही न हों चाहे यक्दम दे या अलग-अलग। हुक्म यही होगा चुनांचे तफ़्सीरे सावी में इस आयत के मातहत है।

यानी आयत का मक़्सद यह है कि अगर तीन तलाकें दीं तो वाक़े हो जाएंगी चाहे एक दम दे या अलग अलग औरत हलाल न रहेगी। आगे फरमाते हैं।

कमा इज़ा क़ाला लहा अन्ते तालिकुन सलासन औ अल-बत्तता व हाज़ा हुवल-मज्मओ अलैहि। यानी अगर कोई शख़्स यूं कह दे कि तुझे तीन तलाकें हैं तो तीन ही वाक़े हो जाएंगी। इस पर उम्मत हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का इत्तिफ़ाक़ है इसी तरह और तफ़ासीर में भी है।

नम्बर (2) रब तआला फरमाता है।

वमन यतअद्दा हुदूदल्लाहे फ़क़द ज़लमा नफ़्सहू ला तदरी लअल्लल्लाहु युहदिसु बअदा ज़ालिका अमरन। यानी जो कोई अल्लाह की हदें तोड़े कि एक दम तीन तलाकें दे दे तो वह अपनी जान पर ज़ुल्म करता है। क्योंकि कभी इंसान तलाक़ दे कर शर्मिन्दा होता है और रुजूअ करना चाहता है। अगर तीन तलाकें एक दम दे देगा तो रुजूअ न कर सकेगा। इस आयत में न फरमाया कि एक दम तीन तलाकें देने वाले की वाक़े न होंगी। बल्कि फरमाया यह गया कि ऐसा आदमी ज़ालिम है अगर इससे तलाक़ एक वाक़े होती तो ज़ालिम कैसे होता? नुववी शरह मुस्लिम **बाबुत्तलाक़ अस्सलासा** में है।

नम्बर (3) बैहक़ी और तबरानी में सुवेद इब्ने ग़फ़्लतहू से रिवायत है कि हज़रत इमाम हसन इब्ने अली रज़ि अल्लाहु तआला अन्हुमा ने अपनी बीवी आइशा ख़शअमीया को एक दम तीन तलाकें दे दीं। बाद में खबर मिली कि वह इमाम हसन के फिराक़ में बहुत रोती हैं। तो आप भी रो पड़े और फरमाने लगे कि अगर मैंने अपने वालिद सैयदना हज़रत अली रज़ि अल्लाहु अन्हु को यह फरमाते हुए न सुना होता कि जो कोई अपनी बीवी को अलग अलग या एकदम तीन तलाकें दे दे तो वह औरत बग़ैर हलाला उसे जाइज़ नहीं तो मैं ज़रूर रुजूअ कर लेता हदीस के अख़ीर में अल्फ़ाज़ यह हैं।

नम्बर (4) इसी सुनने कुबरा बैहक़ी में हज़रत हबीब इब्ने अबी साबित की रिवायत से है।

यानी एक शख़्स सैयदना अली रज़ि अल्लाहु अन्हु की ख़िदमत में हाज़िर हो कर बोला कि मैंने अपनी बीवी को हज़ार तलाकें दी हैं फरमाया कि तीन तलाक़ों ने उसे तुझे तुझ पर हराम कर दिया। बाक़ी तलाकें अपनी और बीवियों को बांट दे यानी वह बेकार हैं ज़ाहिर है कि उस साइल ने यह हज़ार

हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने जाइज़ रखा।

नम्बर (**12**) हाकिम इब्ने माजा अबू दाऊद ने अब्दुल्लाह इब्ने अली इब्ने ज़ैद इब्ने रुकाना से रिवायत की है उन्होंने फरमाया मेरे दादा रुकाना ने अपनी बीवी को तलाक़े बत्ता दी। फिर वह बारगाहे नब्वी में हाज़िर हुए और हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से इस बारे में सवाल किया और अर्ज़ किया कि मैंने एक की नीयत की थी। हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फरमाया कि क्या अल्लाह की क़सम तुमने एक ही नीयत की थी। अर्ज़ किया क़सम है रब की मैंने न नीयत की मगर एक की। पस हज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उनकी बीवी को उन पर वापस फरमा दिया। चुनांचे इब्ने माजा और अबू दाऊद में है।

अगर एक दम तीन तलाक़ों से एक ही तलाक़ वाक़े होती है तो हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम हजरत रुकाना से इस नीयत की क़सम क्यों लेते उन्होंने कहा था **अन्ता तालिकुन तालिकुन तालिकुन** और आख़िरी दो तलाक़ों से पहली तलाक़ की ताकीद थी इसलिए इसे एक क़रार दिया गया। यह रिवायत निहायत सही क़ाबिले ऐतमाद है। चुनांचे इब्ने माजा फरमाते हैं कि **मा अशरफ़ा हाज़ल-हदीसु** यह हदीस क्या ही शरीफुल-असनाद है। अबू दाऊद ने फरमाया है। **हाज़ा असह्हु मिन हदीस इब्ने जुरैहिन।** यह रिवायत बमुक़ाबला रिवायत इब्ने जुरैज ज़्यादा सही है।

नम्बर (**13**) मोअत्ता इमाम मालिक व शाफ़ई व अबू दाऊद व बैहक़ी में बरिवायत मुआविया इब्ने अबी अयाश है कि किसी ने हज़रत अबू हुरैरह और अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास से पूछा कि जो कोई अपनी बीवी को एक दम तीन तलाक़ें दे दे इसका क्या हुक्म है। हज़रत अबू हुरैरह ने फरमाया कि एक तलाक़ उसे जुदा कर देगी और तीन हराम कि बग़ैर हलाला निकाह दुरुस्त न होगा। अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास ने इसकी ताईद फरमाई। इबारत यह है।

नम्बर (**14**) बैहक़ी ने बसाम सरीक़ी से रिवायत की कि इमाम जाफर इब्ने मुहम्मद फरमाते हैं कि जो कोई अपनी बीवी को नादानी से या जान बूझ कर तीन तलाक़ें दे दे वह औरत उस पर हराम हो जाएगी।

नम्बर (**15**) इसी बैहक़ी ने मुसल्लमा इब्ने जाफर अहमद से रिवायत की कि मैंने इमाम जाफर इब्ने मुहम्मद रज़ि अल्लाहु अन्हु से पूछा कि क्या आप यह फरमाते हैं कि जो कोई एक दम तीन तलाक़ें दे तो एक ही तलाक़ वाक़े होगी? फरमाया मआज़ल्लाह हमने यह कभी न कहा उसकी तलाक़ें तीन ही होंगी। (तफ़्सीरे रूहुल-ब्यान पारह दोम)

नम्बर (**16**) मुस्लिम शरीफ़ **किताबुत्तलाक़ बाबुत्तलाक़ अस्सलासा** (सफ़: **478**) में है कि उमर रज़ि अल्लाहु अन्हु के ज़माना में यह क़ानून बना दिया

है। और सहाबा किराम की मौजूदगी में हज़रत उमर फ़ारूक़ का यह क़ानून बना देना कि एक दम तीन तलाक़ें तीन ही होंगी। और इस पर अमल दर आमद हो जाना और किसी सहाबी बल्कि खुद सैयदना अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास का इस पर ऐतराज़ न करना बआवाज़ बुलन्द ख़बर देता है कि वह हदीस या मन्सूख़ या माऊल है क्या सहाब-ए-किराम हदीस के खिलाफ इज्मा कर सकते हैं। दूसरे यह कि इस हदीस में उस औरत का तलाक़ देना मुराद है जिससे ख़ल्वत न हुई हो और वाक़ई अगर कोई शख़्स अपनी ऐसी बीवी को तीन तलाक़ें एक दम इस तरह दे कि तुझे तलाक़ है तलाक़ है तलाक़ है। तो अव्वल तलाक़ ही वाके होगी। और अख़ीर की दो तलाक़ें बेकार। चुनांचे अबू दाऊद **किताबुत्तलाक़ बाब नस्ख़ुल-मुराजअते बअ्‌दत्ततलीक़ाते अस्सलासे।** (सफः 299, मत्बा असहहुल-मताबे) में है कि अबू अस्सहबा ने अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास से पूछा कि आपको खबर नहीं कि ज़माना नब्वी और ज़माना सिद्दीक़ी और शुरू ख़िलाफ़ते फ़ारूक़ी में जो कोई अपनी बीवी को तीन तलाक़ें देता तो एक ही मानी जाती थी। फरमाया हाँ जो ग़ैरे मदख़ूल बहा बीवी को तीन तलाक़ें देता था उनकी तलाक़ एक पड़ती थी। इबारत यह है।

इस हदीस में सराहतन मालूम हुआ कि मुस्लिम की रिवायत का यही मतलब है। और यह हुक्म अब भी बाक़ी है जैसा कि हम मुक़द्दमा में अर्ज़ कर चुके। तीसरे यह कि ज़मानाए नबवी और ज़मानाए सिद्दीक़ी में लोग तीन तलाक़ें इस तरह देते थे कि तुझे तलाक़ है तलाक़ तलाक़। गोया पिछली दो तलाक़ों से पहली तलाक़ की ताकीद करते थे। और ज़मानाए फारूक़ी में लोगों का यह हाल बदल गया कि वह तीन तलाक़ें ही देने लगे लिहाज़ा सूरत मसअला बदलने से हुक्म बदल गया नुववी शरीफ में है।

यानी चूंकि ज़मानाए नबवी में आम तौर पर लोग तीन तलाक़ों में अव्वल तलाक़ से तलाक़ की नीयत करते और पिछली दो से ताकीद करते थे। इसलिए जो कोई बेग़ैर नीयत के भी एक दम तीन तलाक़ें देता तो एक ही मानी जाती थी कि उस वक़्त ग़ालिब यही था मगर ज़मानाए फ़ारूक़ी में लोग आम तौर पर तीन तलाक़ों से तीन ही की नीयत करने लगे। इसलिए तीन जारी कर दी गईं। सूरते मसअला बदल ने से हुक्म मसला बदल गया। देखो क़ुरआन शरीफ़ में ज़कात के सिर्फ़ आठ मसरफ़ बयान हुए। मुअल्लिफ़तुल-क़ुलूब (कुफ़्फ़ार माइल ब–इस्लाम) को भी ज़कात देने की इजाज़त दी गई। मगर ज़मान-ए-फ़ारूक़ी में सहाबा किराम का इज्मा हो गया कि यह मसरफ़ ज़कात सिर्फ़ सात हैं मुअल्लिफ़तुल-क़ुलूब ख़ारिज क्यों कि नुज़ूले क़ुरआन

के वक़्त मुसलमानों की जमाअत थोड़ी और कमज़ोर थी इसलिए ऐसे काफिरों को ज़कात देकर माइल किया जाता था। अह्दे फ़ारूक़ी में न मुसलमानों की क़िल्लत रही न कमज़ोरी लिहाज़ा इनको ज़कात देना बन्द कर दिया गया। वजह बदलने से हुक्म बदला। नस्ख़ नहीं किया गया। अब तक ज़ैद फ़क़ीर था उसे ज़कात लेने का हुक्म दिया गया अब ग़नी हो गया तो ज़कात देने का हुक्म हो गया। कपड़ा नापाक था इससे नमाज़ नाजाइज़ क़रार दी अब पाक हो गया इससे नमाज़ जाइज़ हो गई। हिन्दुस्तान में आजकल कोई तलाक़ की ताकीद जानता भी नहीं तीन ही की नीयत से तलाक़ें देते हैं तो अजीब बात है कि सूरते मसअला कुछ और हुक्म और दिया जाए। अल्लाह ग़ैर मुक़ल्लिदों को अक़्ल दे जिससे हदीस का मक़्सद सही समझा करें।

तीसरा ऐतराज़ : अबू दाऊद जिल्द अव्वल और मंसूर जिल्द अव्वल सफ़: 279 व अब्दुर्रज़्ज़ाक़ बैहक़ी ने अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास से रिवायत की है कि अब्दे यज़ीद अबू रुकाना ने अपनी बीवी उम्मे रुकाना को तलाक़ दी हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने फरमाया कि तलाक़ से रुजूअ कर लो। उन्होंने अर्ज़ किया कि हुज़ूर मैंने तीन तलाक़ें दी हैं। फरमाया हाँ हम जानते हैं मगर रुजूअ करो। और यह आयत तिलावत फरमाई।

अगर इकट्ठी तीन तलाक़ें तीन ही वाक़े होतीं तो रुजूअ ना मुम्किन था वहाँ तो हलाला की ज़रूरत दर पेश आती। मालूम हुआ कि एक तलाक़ बाक़ी रखी गई और दो को रद्द कर दिया गया। ख़्याल रहे कि ख़ुद अबू रुकाना अर्ज़ कर रहे हैं कि मैंने तीन तलाक़ें दी हैं यहाँ ताकीद का गुमान नहीं और फिर भी तलाक़ एक ही मानी गई।

जवाब : अफसोस कि मोतरिज़ ने अबू दाऊद और बैहक़ी की आधी रिवायत नक़्ल की आगे इस ऐतराज़ का निहायत नफ़ीस जवाब वहाँ ही दिया गया है जिसे मोतरिज़ छोड़ गया। इस जगह अबू दाऊद व बैहक़ी में है कि नाफ़े इब्ने अजीर और अब्दुल्लाह इब्ने अली इब्ने यज़ीद इब्ने रुकाना ने अपने दादा रुकाना से रिवायत की कि उन्होंने अपनी बीवी को तलाक़े बत्ता दी थी लिहाज़ा हुज़ूर ने उनकी बीवी को उनकी तरफ वापस कर दिया। यह हदीस दीगर अहादीस से ज़्यादा सही है। क्योंकि उनका बेटा और उसके घर वाले उसके हालात से बमुक़ाबला ग़ैरों के ज़्यादा वाक़िफ़ होते हैं रुकाना के पोते तो फरमाते हैं कि मेरे दादा ने मेरी दादी को तलाक़े बत्ता दी और दीगर हज़रात फरमाते हैं कि तलाक़ें तीन दीं। ला मुहाला पोते की रिवायत ज़्यादा सही होगी।

ख़ुलासा यह कि तीन तलाक़ वाली रिवायत सब ज़ईफ़ हैं बल्कि इमाम बैहक़ी ने इसी जगह फरमाया है कि अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास की रिवायत तो यह है कि अबू रुकाना ने तीन तलाक़ें दी थीं और उन्हें अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास से आठ रिवायतें इसके ख़िलाफ़ हैं और फिर रुकाना की औलाद से भी तलाक़े बत्ता की रिवायत है। बताओ कि तीन तलाक़ों वाली एक रिवायत मोतबर होगी या तलाक़े बत्ता वाली आठ और एक नौ रिवायतें।

हम पहले बाब में अर्ज़ कर चुके हैं कि अबू रुकाना ने बारगाहे नब्वी में अर्ज़ किया था कि या हबीबल्लाह मैंने एक तलाक़ की नीयत की थी। और नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उस पर क़सम भी ली थी तब उन्हें रुजूअ का हुक्म दिया। इमाम नुववी ने फ़रमाया कि अबू रुकाना की तीन तलाक़ों की रिवायत ज़ईफ़ है और मजहूल लोगों से मरवी है उनकी तलाक़ के मुतअल्लिक़ सिर्फ़ वही रिवायत सही है जो हम बयान कर चुके हैं कि उन्होंने तलाक़े बत्ता दी थी। और लफ़्ज़ बत्ता में एक का भी पहलू होता है। और तीन का भी। शायद तीन तलाक़ के ज़ईफ़ रावी ने समझा कि बत्ता तीन तलाक़ को कहते हैं। इसलिए बजाए बत्ता के तीन की रिवायत बिल-माना कर गया जिसमें उसने सख़्त ग़लती की है।

चौथा ऐतराज़ : सैयदना अब्दुल्लाह इब्ने उमर रज़ि अल्लाहु अन्हु ने अपनी बीवी को बहालते हैज़ तीन तलाक़ें इकट्ठी दी थीं। जिन्हें हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने एक क़रार दिया। और इससे रुजूअ करने का हुक्म दिया अगर यह तलाक़ें तीन ही होतीं तो रुजूअ नामुम्किन होता।

जवाब : यह ग़लत है हक़ यह है कि सैयदना अब्दुल्लाह बिन उमर ने अपनी बीवी को बहालते हैज़ तलाक़ एक ही दी थी नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने रुजूअ का हुक्म दिया क्योंकि तलाक़ बहालते तुहर देनी चाहिए। चुनांचे मुस्लिम शरीफ़ जिल्द अव्वल **बाब तहरीमुत्तलाक़े अल-हाइज़** में है।

पाँचवाँ ऐतराज़ : तफ़्सीरे कबीर जिल्द दौम सफ़ः **47 अत्तलाक़ु मर्रताने** की तफ़्सीर में है।

यानी तलाक़े शरई अलग अलग बग़ैर जमा किए देना वाजिब है यही उन लोगों की तफ़्सीर है जिन्होंने कहा है कि इकट्ठी तीन तलाक़ें देना हराम है इससे मालूम हुआ कि एक दम तीन तलाक़ें शरई तलाक़ नहीं।

जवाब : इसका कौन मुंकिर है। बेशक तलाक़ें अलग अलग ही देना ज़रूरी हैं गुफ़्तगू इसमें है कि अगर कोई अपनी हिमाक़त से तीन तलाक़ें इकट्ठी दे दे तो वाक़े भी होंगी या नहीं। तफ़्सीर कबीर की इस इबारत में यह

कहाँ है कि तीन वाक़े न होंगी सिर्फ़ यह है कि यह काम नाजाइज़ है। किसी चीज़ का हराम होना और चीज़ है और इस पर शरई अहकाम का मुरत्तब होना कुछ और। रमज़ान शरीफ़ में खाना पीना हराम है लेकिन अगर कोई खा जाए तो उसका रोज़ा ज़रूर टूट जाएगा। ज़िना हराम है लेकिन अगर कोई करे तो उस पर गुस्ल ज़रूर वाजिब हो जाएगा। हुर्मत का असर असबाब की सबबीयत पर नहीं पड़ता।

छठा ऐतराज़ : तफ़सीरे कबीर मिसरी जिल्द दोम सफ़ः 247 में है।

यानी बहुत उलमा-ए-दीन ने यह भी इख़्तियार किया है कि अगर कोई इकट्ठी दो या तीन तलाक़ें दे दे तो उससे एक ही वाक़े होगी। मालूम हुआ कि आम उलमा-ए-इस्लाम के नज़्दीक इकट्ठी तीन तलाक़ें एक ही होती हैं।

जवाब : मोतरिज़ ने यह न बताया कि वह कौन से उलमा हैं जिनका यह मज़हब है। आओ हम बताएं वह उलमा इब्ने तैमिया और इसके वहाबी पैरोकार हैं उन्हीं का यह मज़्हब है जैसा कि हम पहले बाब में तफ़्सीरे सावी के हवाला से नक़्ल कर चुके हैं और इब्ने तैमिया और उसके मुत्तबईन को उलमा-ए-किराम ने गुम्राह और गुम्राह गर लिखा है। नीज़ मोतरिज़ ने तफ़्सीरे कबीर की पूरी इबारत नक़्ल न की। इस इबारत के आगे यह है।

वल-क़ौलुस्सानी वहुवा क़ौलुन अबी हनीफ़तन रज़ि अल्लाहु अन्हु इन्नहू व इन काना मुहर्रमन इल्ला अन्नहू यक़ओ। यानी दूसरा क़ौल इमाम अबू हनीफ़ा का है कि इकट्ठी तीन तलाक़ें देना अगरचे मना है लेकिन वाक़ेअ़ हो जायेगी। कुछ आगे जाकर तफ़्सीर कबीर ने फ़रमाया कि अइम्मा मुज्तहेदीन का यही मज़्हब है कि जिसे तीन तलाक़ें दी जाएं वह शौहर के लिए हलाल नहीं। देखो तफ़्सीर कबीर मिसरी जिल्द दोम सफ़ः **295**।

सातवाँ ऐतराज़ : अक़्ल भी चाहती है कि इकट्ठी तीन तलाक़ें एक ही मानी जाएं। क्योंकि जिन जिन चीज़ों की अलाहिदगी का हुक्म है। उनको इकट्ठा कर देना एक के हुक्म में होता है। मसलन लेआन में अलग अलग चार क़समें खाना वाजिब है। और हज में जमरों पर अलग अलग सात कंकर मारना वाजिब हैं अगर कोई चारों क़सम एक लफ़्ज़ से खाए। तो यह एक क़सम मानी जाएगी कि तीन क़समें और खानी पड़ेंगीं। अगर कोई सातों कंकर एक दम फेंक दे तो वह एक ही रमी मानी जाएगी और छेः कंकर उसके अलावा मारने होंगे। ऐसे ही अगर कोई क़सम खाए कि मैं हज़ार दरूद पढ़ूँगा और फिर इस तरह पढ़े **अल्लाहुम्मा सल्ले अला सैयदना मुहम्मदिन अल्फ़ा मर्रतिन।** तो इसका यह दरूद हज़ार न माना जाएगा बल्कि एह की

वह ज़ईफ़ न रही हसन बन गई।

1 : मिर्क़ात, मौज़ूआते कबीर, शामी, मुक़द्दमा मिशकात शरीफ़ मौलाना अब्दुल-हक़, रिसाल-ए-उसूल हदीस लिल-जर जानी अव्वल तिर्मिज़ी शरीफ़ वग़ैरह।

2 : उलमा-ए-कामिलीन के अमल से ज़ईफ़ हदीस हसन बन जाती है यानी अगर हदीस ज़ईफ़ पर उलमाए दीन अमल शुरू कर दें तो वह ज़ईफ़ न रहेगी। हसन हो जाएगी। इसीलिए इमाम तिर्मिज़ी फरमा देते हैं।

तरजमा : यह हदीस है तो ग़रीब या ज़ईफ़ मगर अह्ले इल्म का इस पर अमल है।

तिर्मिज़ी के इस क़ौल का मतलब यह नहीं कि यह हदीस है तो ज़ईफ़ ना क़ाबिले अमल मगर उलमा-ए-उम्मत ने बेवक़ूफ़ी से अमल कर लिया और सब गुम्राह हो गए। बल्कि मतलब यही है कि हदीस रिवायत के लिहाज़ से ज़ईफ़ थी। मगर उलमा-ए-उम्मत के अमल से क़वी हो गई।

3 : उलमा के तजरबा और औलिया के कश्फ़ से ज़ईफ़ हदीस क़वी हो जाती है। शैख़ मुहीयुद्दीन इब्ने अरबी ने एक हदीस सुनी थी कि जो सत्तर हज़ार बार कलिमा तैयबा पढ़े उसकी मग़्फ़िरत हो जाती है। एक दफ़ा एक जवान ने कहा कि मैं अपनी मरी हुई माँ को दोज़ख़ में देखता हूँ। शैख़ सत्तर हज़ार बार कलिमा पढ़े हुए थे अपने दिल में उसकी मां को बख़्श दिया। देखा कि जवान हंस पड़ा और बोला अपनी मां को जन्नत में देखता हूँ। शैख़ फरमाते हैं कि मैंने इस हदीस की सेहत उस वली के कश्फ़ से मालूम की (सहीहुल-बिहारी) तहज़ीरुन्नास मुसन्नेफ़ा मौलाना मुहम्मद क़ासिम में यही वाक़या जुनैद रहमतुल्लाह अलैह का नक़्ल फरमाया।

क़ायदा नम्बर 5 : अस्नाद के ज़ुअफ़ से मतने हदीस का ज़ुअफ़ लाज़िम नहीं। लिहाज़ा यह हो सकता है कि एक हदीस एक अस्नाद में ज़ईफ़ हो दूसरी अस्नाद में हसन हो। तीसरी में सहीह इसी लिए इमाम तिर्मिज़ी एक हदीस के मुतअल्लिक़ फरमा देते हैं।

हाज़ल-हदीसु हसनुन सहीहुन ग़रीबुन।

तरजमा : यह हदीस हसन भी है सहीह भी है ग़रीब भी।

तिर्मिज़ी के इस क़ौल का मतलब यही होता है कि यह हदीस चन्द सनदों से मरवी है एक अस्नाद से हसन है दूसरी से सहीह तीसरी से ग़रीब।

क़ायदा नम्बर 6 : बाद का ज़ुअफ़ अगले मुहद्दिस या मुज्तहिद के लिए मुज़िर नहीं। लिहाज़ा अगर एक हदीस इमाम बुख़ारी या तिर्मिज़ी को ज़ईफ़ हो कर मिली हो क्योंकि इसमें एक रावी ज़ईफ़ शामिल हो गया। तो हो सकता है कि वही हदीस इमाम अबू हनीफ़ा रहमतुल्लाह अलैह को सनदे सहीह से मिली हो। आपके ज़माना तक वह ज़ईफ़ रावी इसकी अस्नाद में

मानी यह करो कि सूरः फ़ातिहा के बग़ैर नमाज़ कामिल नहीं होती। मुतलक़न क़िराअत नमाज़ में फर्ज़ है और सूरः फातिहा पढ़ना वाजिब। टकराव उठ गया और कुरआन व हदीस दोनों पर अमल हो गया। और रब फ़रमाता है।

तरजमा : जब कुरआन पढ़ा जाए तो उसे कान लगा कर सुनो और चुप रहो।

लेकिन हदीस शरीफ़ में है।

तरजमा : जो सूरः फ़ातिहा न पढ़े उसकी नमाज़ नहीं होती।

यह हदीस इस आयत के खिलाफ मालूम होती है कि कुरआन मुतलक़न ख़ामोशी का हुक्म देता है और हदीस शरीफ मुक़्तदी को सूरः फातिहा पढ़ने का हुक्म देती है लिहाज़ा यह मानो कि कुरआन का हुक्म मुतलक़ है और हदीस शरीफ़ का हुक्म अकेले नमाज़ी या इमाम के लिए है। मुक़्तदी के लिए इमाम का पढ़ लेना काफी है। कि यह इसकी हुक्मी क़िराअत है। ग़रज़कि यह क़ायदा निहायत अहम है। अगर कोई हदीस आयते कुरआनी के या अपनी से ऊपर वाली हदीस के ऐसे मुख़ालिफ़ मिले कि किसी तरह मुताबेक़त हो ही न सके तो फिर कुरआने करीम या उस से ऊपर वाली हदीस को तरजीह होगी। और यह हदीस क़ाबिले अमल न होगी। यह हदीस मन्सूख़ मानी जाएगी या हुज़ूर की ख़ुसूसियत में से शुमार होगी। इसकी बहुत सी मिसालें हैं।

क़ायदा नम्बर 13 : हदीस का ज़ईफ़ हो जाना ग़ैर मुक़ल्लिदों के लिए क़यामत है क्योंकि इनके मज़्हब का दारो मदार इन रिवायतों पर ही है। रिवायत ज़ईफ़ हुई तो उनका मसला भी फना हुआ मगर हन्फ़ियों के लिए कुछ मुज़िर नहीं क्योंकि हन्फियों के दलाइल यह रिवायतें नहीं उनकी दलील सिर्फ़ क़ौले इमाम है। क़ौले इमाम की ताईद यह रिवायतें हैं। हाँ इमाम की दलील कुरआन व हदीस हैं। मगर इमाम साहब को जब हदीसें मिलीं तो सहीह थीं कि उनकी अस्नादें यह न थीं जो मुस्लिम बुख़ारी की हैं। अगरचे पुलिस मुल्ज़िम को जेल में दे दे तो पुलिस की दलील हाकिम का फैसला है न कि ताज़ीराते हिन्द के दफ़आत। हाँ हाकिम की दलील यह दफ़आत हैं यह बात ख़ूब याद रखो। तक़्लीद अल्लाह की रहमत है ग़ैर मुक़ल्लिदीयत रब का अज़ाब।

पहला बाब

कानों तक हाथ उठाना

नमाज़ में तक्बीरे तहरीमा के वक़्त मर्दों को कानों तक हाथ उठाना सुन्नत है। मगर वहाबी ग़ैर मुक़ल्लिद औरतों की तरह कन्धों से अंगूठे छू कर हाथ बांध लेते हैं। लिहाज़ा हम इस बाब की दो फस्लें करते हैं। पहली फ़स्ल में

अहादीस भी पेश की हैं। जिन पर तुम्हारा पुख़्ता ईमान है। तीसरे यह कि ज़ईफ़ हदीस जब कई अस्नादों से मन्क़ूल हो तो क़वी और हसन बन जाती है कमज़ोर तिन्के मिल कर मज़्बूत रस्सी बन जाते हैं तो कम्ज़ोर अस्नादें मतने हदीस को क़वी कैसे न करेंगी। देखो इसी किताब का मुक़द्दमा। चौथे यह कि इन अहादीस पर उम्मत के उलमा, औलिया, सालेहीन ने अमल किया है। उम्मत के अमल से ज़ईफ़ हदीस क़वी हो जाती है। पाँचवें यह कि अगर अहादीस ज़ईफ़ भी हों तब भी इमामे आज़म अबू हनीफ़ा जैसी हस्ती का उसे क़बूल करना ही क़वी बना देगा। क्योंकि आलिम सालेह का क़बूल कर लेना ज़ईफ़ हदीस को क़वी कर देता है। छठे यह कि आपका इन अहादीस को ज़ईफ़ कह देना जरहे मज्हूल है। जो किसी तरह क़ाबिले क़बूल नहीं क्योंकि इसमें वजह ज़ुअफ न बताई गई। कि क्यों ज़ईफ है। सातवें यह कि अगर मुहद्देसीन को यह अहादीस ज़ईफ़ हो कर मिलीं तो इमाम अबू हनीफ़ा रज़ि अल्लाहु अन्हु पर इसका असर नहीं हो सकता। क्योंकि उनके वक़्त में ज़ईफ़ रावी अस्नादों में शामिल नहीं हुए थे बाद का ज़ुअफ़ पहले वालों को मुज़िर नहीं वहाबियों के इस माया नाज़ ऐतराज़ के टुकड़े उड़ गए। **अल्हम्दुलिल्लाहे रब्बिल-आलमीन।**

दूसरा बाब

नाफ़ के नीचे हाथ बांधना सुन्नत है

ग़ैर मुक़ल्लिद वहाबी नमाज़ में सीने पर यानी नाफ के ऊपर हाथ बांधते हैं इसलिए हम इस बाब की भी दो फ़स्लें करते हैं। पहली फ़स्ल में अपने दलाइल दूसरी फ़स्ल में वहाबियों के ऐतराज़ात व जवाबात।

पहली फ़स्ल

नमाज़ में मर्द को नाफ के नीचे हाथ बांधना सुन्नत है सीने पर हाथ बांधना सुन्नत के ख़िलाफ है। इसके मुतअल्लिक़ बहुत सी अहादीस वारिद हैं हम सिर्फ़ चन्द हदीसें पेश करते हैं।

हदीस 1 : तरजमा : हज़रत वाइल इब्ने हजर से रिवायत है कि मैंने हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को देखा कि आपने अपना दाहिना हाथ बाएं हाथ पर रखा नाफ के नीचे यह हदीस इब्ने अबी शैबा ने सहीह अस्नाद से नक़्ल की इसके सब रावी सिक़ह हैं।

हदीस नम्बर 2 : इब्ने शाहीन ने हज़रत अली रज़ि अल्लाहु अन्हु से रिवायत की।

तरजमा : तीन चीज़ें नुबुव्वत की आदात में से हैं। इफ़्तार में जल्दी करना। सहरी में देर करना। नमाज़ में दाहिना हाथ बाएं हाथ पर नाफ के नीचे रखना।

इस हदीस में किसी तावील की गुंजाइश नहीं। यहाँ तो मस्जिद गूंज जाने का ज़िक्र है। गूंज बग़ैर शोर के नहीं पैदा होती।

जवाब : इस ऐतराज़ के चन्द जवाब हैं एक यह कि आपने हदीस पूरी पेश नहीं की अव्वल इबारत छोड़ दी वह यह है मुलाहिज़ा हो।

तरजमा : लोगों ने आमीन कहना छोड़ दी हालांकि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम। अलख़

इस जुमला से मालूम हुआ कि आम सहाबा किराम ने बुलन्द आवाज़ से आमीन छोड़ दी थी जिस पर सैयदना अबू हुरैरह यह शिकायत फरमा रहे हैं और सहाबा का किसी हदीस पर अमल छोड़ देना इस हदीस के नस्ख़ की दलील है। यह हदीस तो हमारी ताईद करती है न कि तुम्हारी। दूसरे यह कि अगर यह हदीस सही मान भी ली जाए तो अक़्ल और मुशाहदा के ख़िलाफ़ है और जो हदीस अक़्ल व मुशाहिदा के ख़िलाफ़ है वह क़ाबिले अमल नहीं। खुसूसन जब कि तमाम मशहूर और आयाते कुरआनिया के भी ख़िलाफ़ है।

क्योंकि इस हदीस में मस्जिद गूंज जाने का ज़िक्र है। हालांकि गुंबद वाली मस्जिद में गूंज पैदा होती है न कि छप्पर वाली मस्जिद में। हुज़ूरे अनवर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की मस्जिद शरीफ आपके ज़माना में मअमूली छप्पर वाली थी। वहाँ गूंज पैदा हो ही कैसे सकती थी। आज कोई ग़ैर मुक़ल्लिद साहब किसी छप्पर वाले घर में शोर मचा कर गूंज पैदा कर के दिखा दें। इंशाअल्लाह चीख़ते चीख़ते मर जाएंगे मगर गूंज न पैदा होगी। इस ऐतराज़ के बाक़ी वह जवाब हैं जो ऐतराज़ नम्बर 3 के मातहत अर्ज़ किए गए। तीसरे यह कि यह हदीस कुरआने करीम के भी ख़िलाफ़ है रब फरमाता है **ला तरफ़ऊ अस्वातकुम फ़ौक़ा सौतिन्नबीये** अपनी आवाज़ें नबी की आवाज़ से ऊंची न करो अगर सहाबा ने इतनी ऊंची आमीन कही कि मस्जिद गूंज गई तो इन सब की आवाज़ हुज़ूर की आवाज़ से ऊंची हो गई। कुरआने करीम की खुली मुख़ालफ़त हुई जो हदीस मुख़ालिफ़े कुरआन हो क़ाबिले अमल नहीं।

ऐतराज़ नम्बर 5 : बुख़ारी शरीफ़ में है।

तरजमा : हज़रत अता फ़रमाते हैं कि आमीन दुआ है और हज़रत इब्ने ज़ुबैर और उनके पीछे वालों ने आमीन कही यहाँ तक कि मस्जिद में गूंज पैदा हो गई।

इस हदीस से साफ मालूम हुआ कि आमीन इतनी चीख़ कर कहना चाहिए कि मस्जिद गूंज जाए।

जवाब : इस ऐतराज़ के भी चन्द जवाब हैं। एक यह कि इसका पहला जुमला हमारे मुताबिक़ है कि आमीन दुआ है और कुरआने करीम फरमाता

एक रात में ख़त्म किया जाएगा तो हाफ़िज़ को बहुत तेज़ पढ़ना पड़ेगा जिस से सिवाए **यालमून तालमून** समझ न आएगा लिहाज़ा शबीना पढ़ना हुक्मे कुरआन के ख़िलाफ़ है।

जवाब : इस ऐतराज़ के दो जवाब हैं। एक यह कि तुम्हारे बानी मज़्हब मौलवी इस्माईल देहलवी अस्र से मग़रिब तक पूरा कुरआन पढ़ लेते थे। बताओ वह ठहर ठहर कर पढ़ते थे या **यअ्लमूना तअ्लमूना** वह हराम के मुर्तकिब थे या नहीं। हज़रत दाऊद अलैहिस्सलाम बहुत जल्द सारी ज़बूर पढ़ लेते थे। हज़रत उस्मान ग़नी, तमीम दारी, अब्दुल्लाह इब्ने ज़ुबैर वग़ैरहुम अकाबिर सहाबा ने एक रकाअत में सारा कुरआन पढ़ा है। ख़ुद हुज़ूरे अनवर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम तहज्जुद की एक रकाअत में दो पारे और नमाज़े ख़सूफ़ में एक रकाअत में ढाई पारे तिलावत फरमाते थे जिनके हवाले पहली फस्ल में गुज़र गए। क्या आपका यह ऐतराज़ इन हस्तियों पर भी जारी होगा। अगर नहीं तो क्यों?

दूसरा जवाब यह है कि रब तआला ने बहुत सों को कुव्वते लेसानी ऐसी बख़्शी है कि वह बहुत तेज़ पढ़ कर भी साफ और वाज़ेह पढ़ सकते हैं कुछ में यह कुव्वत नहीं वह अगर तेज़ पढ़ें तो सिर्फ़ **यअ्लमून तअ्लमून** ही समझ में आएगा। शबीना सिर्फ़ पहली क़िस्म के हुफ़्फ़ाज़ पढ़ें दूसरी क़िस्म के हुफ़्फ़ाज़ हरगिज़ न पढ़ें इस आयते करीमा का यही मंशा है। आयते करीमा अपनी जगह हक़ है और हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और उन बुज़ुर्ग सहाबा किराम का अमल शरीफ़ जिन्होंने एक रकाअत में बहुत दराज़ तिलावत की अपनी जगह हक़ है।

ऐतराज़ नम्बर 2 : हदीस तिर्मिज़ी, अबू दाऊद, दारमी ने हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने उमर से रिवायत की। (मिश्कात)

तरजमा : बेशक फरमाया रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने कि जो तीन दिन से कम में कुरआन पढ़े वह कुरआन न समझेगा।

इस हदीस से मालूम हुआ कि तीन दिन से कम में पूरा कुरआन हरगिज़ न पढ़ना चाहिए क्योंकि फिर कुरआन समझ में न आएगा। लिहाज़ा शबीना बिल्कुल मना है।

जवाब : इसके चन्द जवाब हैं। एक यह कि यह हदीस तुम्हारे भी ख़िलाफ़ है। तुम तो तीन शब का शबीना भी हराम कहते हो और इस हदीस में इसकी इजाज़त आ गई। दूसरे यह कि तुम्हारे पेशवा मौलवी इस्माईल देहलवी अस्र से मग़रिब तक कुरआने करीम ख़त्म कर लेते थे। वह भी इस ज़द में आ जाते हैं उनकी सफ़ाई पेश करो। जो तुम्हारा जवाब है वही हमारा।

तीसरे यह कि सरकारे दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इस हदीस में आम लोगों की हालत बयान फ़रमाई कि अलल-उमूम हुफ़्फ़ाज़ अगर एक या दो दिन में ख़त्मे कुरआन करें तो समझ न सकेंगे। बाज़ बन्दे जो इस पर क़ादिर हैं वह इस हुक्म से अलग हैं जैसे हज़रत उस्मान वग़ैरहुम सहाबा किराम एक रकाअत में कुरआन ख़त्म करते थे इसी लिए इस हदीस की शरह में मिर्क़ात व लम्आत शरीफ़ में है कि बाज़ बुज़ुर्ग एक दिन व रात में तीन ख़त्म करते थे कुछ हज़रात आठ ख़त्म फ़रमा लेते थे। और शैख़ अबू मदयन मग़्रिबी एक दिन व रात में सत्तर हज़ार कुरआन पढ़ लेते थे। उन्होंने एक दफ़ा हजरे असवद चूम कर दरवाज़ा काबा पर आते आते ख़त्मे कुरआन कर लिया। और लोगों ने हरफ बहरफ सुना। (मिर्क़ात जिल्द दोम सफ़ः **216** बाब तिलावतिल-कुरआन में है)

तरजमा : हक़ यह है कि यह हुक्म मुख़्तलिफ़ लोगों के लिहाज़ से मुख़्तलिफ़ है।

ऐतराज़ नम्बर 3 : हदीस मुस्लिम व बुख़ारी ने हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने उमर से तवील हदीस नक़्ल फ़रमाई जिसके आख़िरी अल्फाज़ यह हैं।

तरजमा : हर हफ़्ता में एक कुरआन ख़त्म करो इस पर ज़्यादा न करो। देखो हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने उमर ने हुज़ूर से जल्द ख़त्म करने की इजाज़त मांगी हुज़ूर ने अव्वलन हुक्म दिया कि एक माह में एक ख़त्म करो इसरार करने पर इरशाद हुआ कि एक हफ़्ता से कम में कुरआन ख़त्म न करना चाहिए। लिहाज़ा शबीना मना है।

जवाब : सरकार का यह जवाब सैयदना अब्दुल्लाह इब्ने उमर रज़ि अल्लाहु अन्हु की हालत के लिहाज़ से है वह एक दो रात में ख़त्म करने पर साफ न पढ़ सकते होंगे। या यहाँ दाइमी तिलावत का ज़िक्र है कि अगर रोज़ाना हर इंसान एक ख़त्म किया करे तो दुनियावी कारोबार मुअत्तल हो जाएंगे। अगर साल में एक आध दिन में कुरआन खत्म किया जाए तो कोई हरज नहीं जिन सहाबा ने एक एक रकाअत में एक एक कुरआन पढ़ा है उन्हें यह हदीस मालूम थी फिर भी एक रकाअत में ख़त्म करते थे।

ऐतराज़ नम्बर 4 : हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने कभी एक दो रात में पूरा कुरआन न पढ़ा लिहाज़ा शबीना बिदअत है और बिदअत से बचना चाहिए।

जवाब : हुज़ूरे अनवर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का एक शब में पूरा कुरआन न पढ़ना दो वजह से है एक यह कि आपकी अव्वल हयात शरीफ में पूरा कुरआन उतरा ही न था वफ़ात से कुछ पहले कुरआन की तक्मील

इस तीसरी आयत में नाविल क़िस्से कहानियों को हदीस फरमाया गया है।

इस्तिलाहे शरीअत में हदीस उस कलाम व इबारत का नाम है जिस में हुज़ूर सैयदे आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के अक़्वाल या आमाल इसी तरह सहाबाए किराम के अक़्वाल व आमाल बयान किए जाएं इस आमिल बिल-हदीस फ़िर्के से सवाल है कि तुम कौन सी हदीस पर आमिल हो लुग़वी पर या इस्तेलाही पर अगर लुग़वी हदीस पर आमिल हो तो चाहिए कि हर नाविल गो क़िस्सा ख़्वाँ अह्ले हदीस हो कि वह हदीस यानी बातें करता है हर सच्ची झूठी बात पर अमल करता है। अगर इस्तेलाही हदीस पर आमिल हो तो फिर सवाल यह होगा कि हर हदीस पर आमिल हो या कुछ पर दोम तो ग़लत है क्योंकि हुज़ूर के किसी न किसी फरमान पर हर शख़्स ही आमिल है। हुज़ूर फरमाते हैं कि सच नजात देता है झूठ हलाक करता है। हर मुश्रिक व काफिर इसका क़ाइल है वह सब ही अह्ले हदीस हो गए। तुम हन्फ़ी, शाफ़ई, मालकी, हंबली मुसलमानों को अह्ले हदीस क्यों नहीं मानते यह तो हज़ारहा हदीसों पर अमल करते हैं। और अगर अह्ले हदीस के मानी हैं, हुज़ूर की सारी हदीसों पर अमल करने वाले तो यह ना मुमकिन है क्योंकि हुज़ूर की बाज़ हदीसें मन्सूख़ हैं, कुछ नासिख़ बाज़ हदीसों में हुज़ूर के वह ख़ुसूसी आमाल शरीफ़ बयान हुए जो हुज़ूर के लिए मुबाह या फर्ज़ थे। हमारे लिए हराम हैं। जैसे मिंबर पर नमाज़ पढ़ना, ऊंट पर तवाफ़ फ़रमाना, हज़रत हुसैन सैय्युदश्शुहदा ख़ातमे आले अब्बास रज़ि अल्लाहु अन्हु के लिए सज्दा लंबा फ़रमाना। हज़रत उमामा बिन्ते अबी अल-आस को कन्धे पर ले कर नमाज़ पढ़ाना, नौ बीवियाँ निकाह में रखना, बग़ैर महर निकाह होना, अज़वाज में अद्ल वाजिब न होना बल्कि हदीस से साबित है कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम कलिमा यूँ पढ़ते थे **ला इलाहा इल्लल्लाहु व इन्नी रसूलुल्लाहे** अल्लाह के सिवा कोई माबूद नहीं और मैं अल्लाह का रसूल हूँ। ग़ैर मुक़ल्लिद इसी हदीस पर अमल करके इस तरह कलिमा का विर्द करें अगर मिर्ज़ा क़ादयानी की तरह तमाम दुनिया उनकी तवाज़ो लानत से न करे तो हमारा ज़िम्मा। ग़र्ज़कि हदीस पर हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के ऐसे अक़्वाल व आमाल भी ज़िक्र हैं जो हुज़ूर के लिए कमाल हैं हमारे लिए कुफ़्र।

इसी तरह हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के वह अफ़आले करीमा जो निस्यान या इज्तिहादी ख़ता से सरज़द हुए। हदीस में मज़्कूरा हैं आमिल बिल-हदीस साहिबान को चाहिए कि उन पर भी अमल किया करें ताकि हर हदीस पर आमिल हो लें। बहरहाल कोई शख़्स हर हदीस पर अमल नहीं कर सकता जो इस मानी से अपने को अह्ले हदीस या आमिल बिल-हदीस कहे